चन्दामामा
जून १९८४
२ रु

Results of Chandamama Camlin Colouring Contest No. 35 (Hindi)

1st Prize: Rajesh Kumar Singh, Calcutta-700 040. *2nd Prize:* Miss Sudha I Vasu, Bombay-400 067. Jayandra D. Patil Baroda-390 004, Sudhir Namdeo Penkar, Bombay-400 037. *3rd Prize:* D. Madan Gopal Rao, Durg. Ku. Tutul Biswas, Bilaspur. Nimesh Tandon, Calcutta-700 006. Rashmi Mittal, New Delhi-110 063. Ganesh P. Rudrakar, Wardha. Prabir Kumar Dutta, Krishnagar, Ritesh Dewangan, Rajnandgaon. Gireesh Vasant Chiddarwar, Digras-445 203. Kamalesh Vishnu Chawhan, Kihin. Jyoti Narula, New Delhi-64.
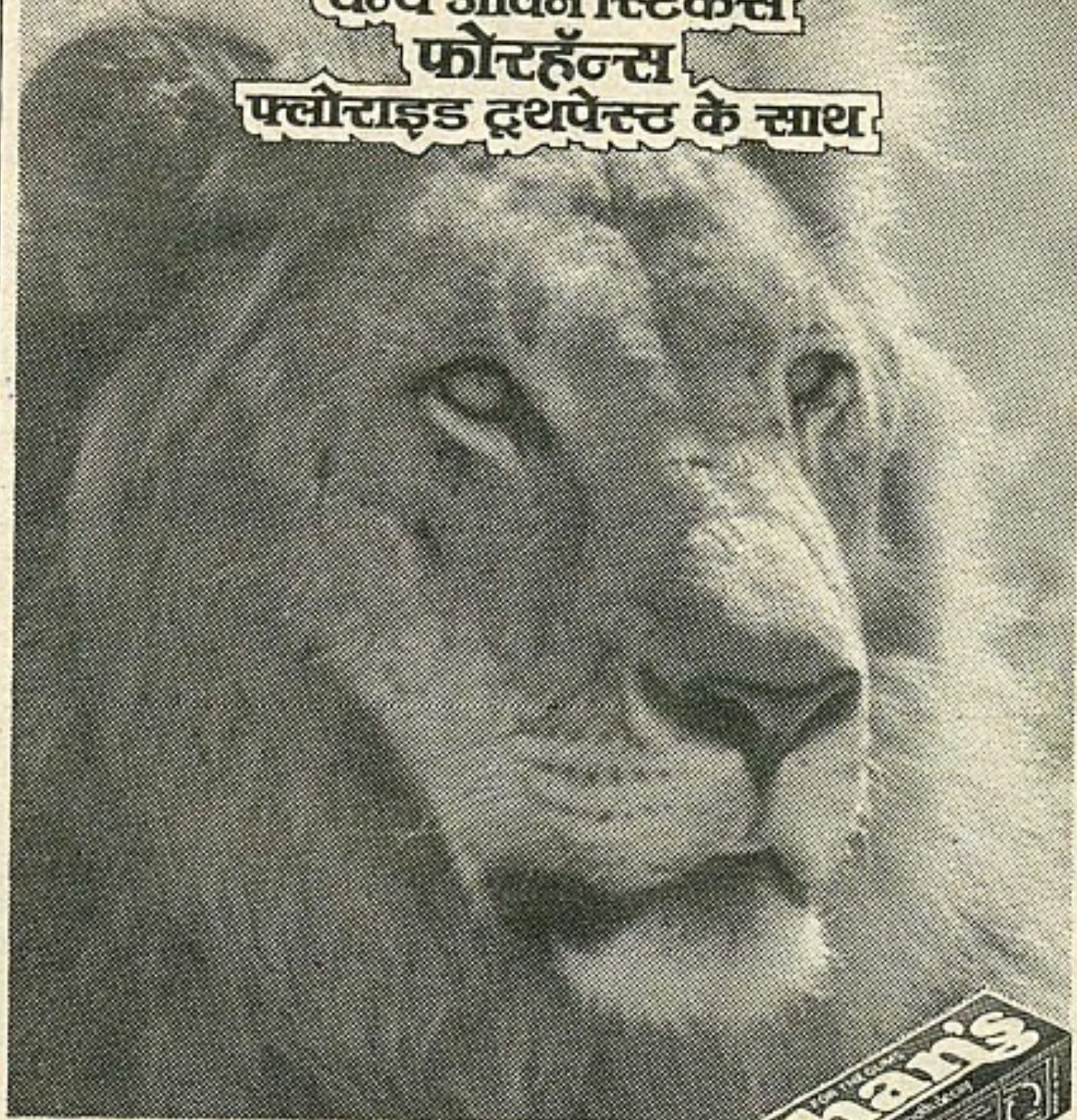
Pic. E. Hanumantha Rao.
Courtesy: World Wildlife Fund-India Photo Library.

Campa
Campa
Campa
कैम्पा के संग संग
लेते मज़ा हम!
कैम्पा आरेंज फ्लेवर - मौजमस्ती का स्वाद!
OBM/5361

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

आलस्य सभी बुराइयों की जड़ है। आलसी व्यक्ति साधन के बावजूद कैसे चोरी करने पर उतारू हो जाता है—यह "किसान और सोना" नामक कहानी में पढ़िये।

अच्छी नीयत का फल बराबर अच्छा होता है और दुर्भावना बराबर अपने को ही संकट में डाल देती है। "अनोखी चिड़िया" के तीनों मित्र हमें यही सीख देते हैं।

पढ़िए इसके अतिरिक्त एक से एक रोचक, आनन्द दायक और ज्ञान से भरपूर रचनाएँ।

अमर वाणी

उपेक्ष्य समये कार्यें, भग्ने चिन्ता निरर्थका; ।
निर्गते सलिले तत्र, सेतु बन्धो निरर्थकः ।।

[जिस प्रकार पानी के बह जाने पर मेंड़ बनाना निरर्थक है, उसी प्रकार समय पर काम नहीं करने पर बिगड़े हुए काम के लिए चिंता करने से भी कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।]

वर्षः ३६ जून १९८४ अंकः १०
एक प्रतिः २-०० :: वार्षिक चन्दाः २४-००

चन्दामामा विशेष संवाद

राक्षस-छिपकलियों का नाश कैसे हुआ ?

लगभग साढ़े छः करोड़ वर्ष पहले सारे विश्व में दिनोसार्स नामक राक्षस-छिपकलियाँ व्याप्त थीं। अचानक ये कैसे अदृश्य हो गईं ? इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों का विश्वास है कि अन्तरिक्ष से निकल कर एक ग्रह पृथ्वी से टकराया जिससे पृथ्वी पर प्रलय हो गया। उसी प्रलय में राक्षस-छिपकलियाँ समूल नष्ट हो गईं।

पशु पर मानव-नियंत्रण

आज तक इतिहासकार यही बताते रहे हैं कि पशुओं पर मानव का नियंत्रण ई॰ पू॰ के छः हजार वर्ष से ही है। लेकिन हाल ही में लन्दन विश्वविद्यालय के पालबान नामक पुरातत्व वेत्ता ने अपने अनुसन्धान में यह बताया है कि लगभग एक लाख वर्ष पूर्व ही मानव ने जानवरों पर, खास कर घोड़ों पर नियंत्रण करना सीख लिया था।

स्वस्तिक का चिह्न

स्वस्तिक का चिह्न भारतीय संस्कृति का पवित्र प्रतीक है। प्राचीन काल से यूनानी तथा मध्य युगीन ईसाई भी इसे पवित्र मानते रहे हैं। लेकिन प्राचीन ग्रंथों में इसकी आकृति के इतिहास के बारे में कोई वैज्ञानिक आधार नहीं मिलता।

टेक्सास के सी॰ जे॰ रान्सम तथा हान्स स्कलटर के अनुसार जब पुच्छल तारा की प्रकाश किरणें पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से होकर गुजरी होंगी तभी आसमान में यह आकृति पहली बार दिखाई दी होगी।

क्या आप जानते हैं ?

१. "अभिज्ञान शाकुन्तलम" नामक संस्कृत नाटक के रचयिता कौन हैं ?

२. "इलियड" और "ओडेसी" नामक ग्रीक महाकाव्यों के कवि कौन हैं ?

३. पैराडाइज़ लॉस्ट" के कवि कौन हैं ?

४. "अर्थशास्त्र" के लेखक कौन हैं ?

५. उत्तम साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता ब्रिटिश प्रधान मंत्री कौन हैं ?

(उत्तर ६४ वें पृष्ठ पर देखें)

किसान और सोना

मंगाराम पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त चार एकड़ अच्छी उपजाऊ ज़मीन का मालिक था। किन्तु वह बहुत आलसी था। उस जमीन पर वह खुद खेती-बाड़ी नहीं करता था, बल्कि इजारे पर देकर जो कुछ प्राप्त होता था, उसी से अपना गुजारा कर लेता था। उसकी पत्नी बराबर उस पर दबाव डालती थी कि तुम निठल्ले क्यों बैठे हो, कोई न कोई व्यापार क्यों नहीं करते। पर वह यही जवाब देता— "हमें किस बात की कमी है ? बड़े आराम से दिन कट रहे हैं।"

"आराम का मतलब क्या बैठे-बैठे खाना ही है। मैं उस दिन का इंतजार कर रही हूँ कि कब मुझे चन्द्रहार और सोने की करधनी बना कर दोगे। लेकिन तुम्हारी आमदनी को देखने पर लगता है कि मेरी आशा इस जन्म में कभी पूरी होने वाली नहीं है।" उसकी पत्नी ने डाँट कर कहा।

मंगाराम भी कई दिनों से यही विचार कर रहा था कि पत्नी को चन्द्रहार और सोने की करधनी बना कर देना है। तभी अड़ोस-पड़ोस के परिवारों के बीच उसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। लेकिन उसकी आमदनी उसके परिवार को संभालने के लिए ही पर्याप्त नहीं हो पाती थी। ऐसी हालत में भला वह अपनी पत्नी की इच्छाओं की पूर्ति कैसे कर सकता था।

एक दिन उसने अपने एक मित्र से सलाह मांगी— "दोस्त बताओ, धन कैसे कमाया जाता है ?"

दोस्त ने सोच-विचार कर कई प्रकार की सलाहें दीं, पर उन में से एक भी मंगाराम को पसंद न आई।

"तुम्हारी सलाहें तो मुसीबतों से भरी हैं और उन पर अमल करने में तो काफी समय भी लगेगा। इसलिए तुम मुझे ऐसा उपाय बताओ जिस से मैं एक ही दिन में बहुत-सा धन कमा

लूँ ।'' मंगाराम ने कहा ।

''तुम्हारा विचार गजब का है । एक दिन में बहुत धन कमाना हो तो चोरी करने के सिवाय कोई दूसरा उपाय नहीं है ।'' दोस्त ने बताया ।

उस पर मंगाराम ने अपने मन में चोरी करने का निर्णय कर लिया । लेकिन उसने सोचा कि उसके गाँव में सब लोग जान-पहचान के हैं इसलिए पड़ोसी गाँव में जाकर ही चोरी करना उचित होगा ।

दूसरे दिन सवेरे उठ कर मंगाराम अपनी पत्नी से बोला— ''सुनो, मैं धन कमाने के वास्ते पड़ोसी गाँव में जा रहा हूँ । लौटते ही मैं तुम्हारे लिए चन्द्रहार और सोने की करधनी बनवाकर ला दूँगा ।''

ये बातें सुनकर मंगाराम की पत्नी बहुत खुश हुई ।

दोपहर तक मंगाराम पड़ोसी गाँव में पहुँचा । उस समय वहाँ पर हाट लगी थी । वह हाट में आए हुए सब लोगों पर नज़र दौड़ा कर प्रत्येक व्यक्ति को परखता गया । उसका विचार था कि उनमें से जो अमीर मालूम हो, रात को उसी के घर में घुस कर चोरी करनी चाहिए ।

उस समय उसे एक किसान दंपत्ति दिखाई पड़ी । वे देखने में गरीब से लग रहे थे पर किसान अपनी पत्नी से कह रहा था— ''अरी सुनो ! घर पहुँचते ही थैली में रखे चन्द्रहार और सोने की करधनी को सावधानी से छिपा कर रख देना ।''

ये बातें सुनकर मंगाराम रुक गया । उसने सोचा कि उसकी समस्या बड़ी आसानी से हल हो गई है । वह धन की चोरी करके उस धन से वे ही चीज़ें बनाकर अपनी औरत को देना चाहता था । ऐसी हालत में वे ही चीज़ें मिल जाएँ तो इस से बढ़कर भाग्य और क्या हो सकता है ।

मंगाराम ने किसान दंपत्ति को अच्छी तरह से याद रखा । उनकी आँख बचाकर उनके पीछे चलता रहा । वे ज्यों ही हाट से घर पहुँचे, त्यों ही उनके पीछे जाकर उसने पूछा— ''महाशय, मैं परदेसी हूँ, यहाँ पर मेरी जान-पहचान के कोई नहीं है । क्या आप आज रात को मुझे अपने घर में आश्रय दे सकते हैं ?''

किसान ने आदर पूर्वक जवाब दिया—

"आज रात को ही क्या, तुम जितने दिन हमारे घर में रहना चाहते हो, रह सकते हो ।"

"उस दिन रात को किसान की पत्नी ने मंगा राम को स्वादिष्ठ भोजन बना कर खिलाया । पर मंगाराम ने इस डर से भर पेट खाना नहीं खाया कि ज्यादा खाने से गहरी नींद आ जाएगी ।

रात को सोने के लिए जाने के पहले किसान ने अपनी पत्नी से पूछा— "चन्द्रहार और सोने की करधनी को सावधानी से आले में छिपाकर रखा है न ?"

पत्नी ने जवाब दिया— "हाँ जी, सावधानी से छिपा कर रख दिया है ।"

किसान की पत्नी का जवाब सुनकर मंगाराम ने सोचा कि उसका सपना साकार हो गया है । उसने उस आले को अच्छी तरह से याद रखा । आधी रात के करीब चुपके से उठ कर वह किसान-दंपति के कमरे में गया ।

किसान खर्राटे लेकर गहरी नींद में सो रहा था । किसान की पत्नी सारे बदन पर दुपट्टा ओढ़े सो रही थी ।

मंगाराम सोचने लगा— "ये लोग भी कैसे लापरवाह हैं । इतना सारा सोना छिपा कर घर में एक परदेशी को आश्रय देकर कैसे निश्चिंत सो रहे हैं ।" फिर यह सोचकर आले के पास पहुँचा कि इस प्रकार इनका बेखबर सो जाना उसी के लिए लाभदायक है ।

आले में एक गठरी थी, वह बहुत भारी थी । मंगाराम को आश्चर्य हुआ-चन्द्रहार और सोने की करधनी वाली गठरी इतना भारी कैसे

हो सकती है । यों विचार कर उसने आले में से गठरी को जोर से खींचना चाहा, पर भूल से उस का पैर एक तिपाई पर पड़ा और उसके गिरने से बड़ी आवाज़ हुई ।

उस आवाज़ को सुनकर किसान और उसकी पत्नी जाग गए और वहाँ मँगाराम को देखा । लज्जा के मारे वह भाग भी नहीं सकता था ।

किसान ने मंगाराम से पूछा— "आले के पास तुम्हारा क्या काम था ? दर असल वहाँ पर चन्द्रहार और करधनी नहीं हैं । अपने खेत में बोने के लिए बीज मात्र हैं ।" यों कह कर किसान ठहाके मार कर हंसने लगा ।

"देखने में बुजुर्ग जैसे लगते हो । क्या चोरी करने आए हो ?" किसान की पत्नी ने पूछा ।

"मैं चोरी नहीं करना चाहता था। आप तो बड़े ही अच्छे लोग हैं। हर किसी पर विश्वास करते हैं। इसे देख मैंने आप लोगों को सबक़ सिखाना चाहा कि नये लोगों पर आप आइंदा विश्वास न करें। आले से सोना निकाल कर कहीं छिपा करके आप लागों को एक दिन के लिए रुलाना चाहा, फिर आपके हाथ सौंप कर अपने गाँव जाना चाहता था, पर आले में सोना हाथ न लगा।" अपने अपराध को छिपाने के ख्याल से मंगाराम ने यह कहानी गढ़ ली।

किसान हँस कर बोला— "चाहे तुम्हारा उद्देश्य कुछ भी रहा हो, पर हमारे घर में नाम मात्र के लिए भी सोना नहीं है। दर असल बात यह है कि आज तक हमें अपना निजी खेत कहलाने के लिए थोड़ी सी भी जमीन नहीं थी। चार साल तक दूसरों के खेतों को इजारे पर लेकर खेती करके थोड़ा बहुत धन जोड़ लिया और इसी वर्ष मैं ने अपना खेत खरीद लिया। निजी खेत हो तो अपनी पत्नी के लिए चन्द्रहार और करधनी बनवाने के लिए एक वर्ष का समय पर्याप्त है। इसी काम के वास्ते आज हाट से बीज खरीद कर उसे ही चन्द्रहार और करधनी नाम से पुकार रहा हूँ। अब बात तुम्हारी समझ में आ गई ?"

किसान के मुँह से ये बातें सुनकर मंगाराम की अक्ल ठिकाने आ गई। किसान दो एकड़ निजी खेत की आमदनी से एक साल के अन्दर अपनी पत्नी के लिए गहने बनवा सकता है, पर वह तो चार एकड़ जमीन का मालिक है। आलस को त्याग कर खुद खेतीबाड़ी करे तो वह अपनी पत्नी के लिए चन्द्रहार और करधनी ही नहीं, बल्कि और कई गहने बना सकता है।

इस के बाद मंगाराम किसान के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करके अपने गाँव लौट आया और स्वयं खेतीबाड़ी करना शुरू करके हर साल अपनी पत्नी को नये-नये गहने बनवाकर देने लगा।

इस के बाद फिर मंगाराम की पत्नी ने कभी उससे व्यापार शुरू करने के लिए झगड़ा नहीं किया।

१३

[पिंगल के बड़े भाइयों ने घर की सारी संपत्ति हड़प कर आपस में बांट ली पर अद्भुत थैली को लेकर आपस में झगड़ा करने लगे। यह खबर मिलते ही राजा ने उन दोनों को कारागार में डाल दिया। उधर पिंगल जिस जहाज पर यात्रा कर रहा था, उसमें तथा किसी दूसरे जहाज के बीच युद्ध शुरू हो गया। महा नाविक ने गुलामों को मुक्त करके आत्मरक्षा के लिए उनके हाथ में हथियार दे दिये। —इसके बाद---]

जहाज के मालिक के आदेश पर जंजीरों से बंधे हुए सभी गुलाम मुक्त कर दिये गए। उन्हें अपनी और जहाज की रक्षा के लिए धनुष-बाण और तलवार भी दे दिए गए। उस समय महा नाविक उन के प्रति अपार प्रेम का प्रदर्शन करते हुए बोला— "तुम लोग इस पल से गुलाम नहीं बल्कि योद्धा हो। हमारा जहाज इस वक्त खतरे में फंसा हुआ है। हमारे जहाज पर अधिकार करने के लिए दुश्मन कोशिश कर रहा है। यदि हम उसके हाथ हार गए तो हमें ज़िंदगी भर उस की गुलामी करनी होगी। यदि हम विजयी हो जाते हैं तो स्वेच्छा पूर्वक अपना जीवन बिता सकते हैं। इसलिए तुम लोग अपने प्राणों की रक्षा के लिए तथा स्वतंत्रता के हेतु जी-जान से युद्ध करो। मेरे ख्याल से ज़िन्दगी भर गुलाम बनकर जीने के बजाय, चन्द दिन तक आजाद बनकर जीवन बिताना कहीं अच्छा है। इसलिए हमें इस वक्त अपनी जान का मोह
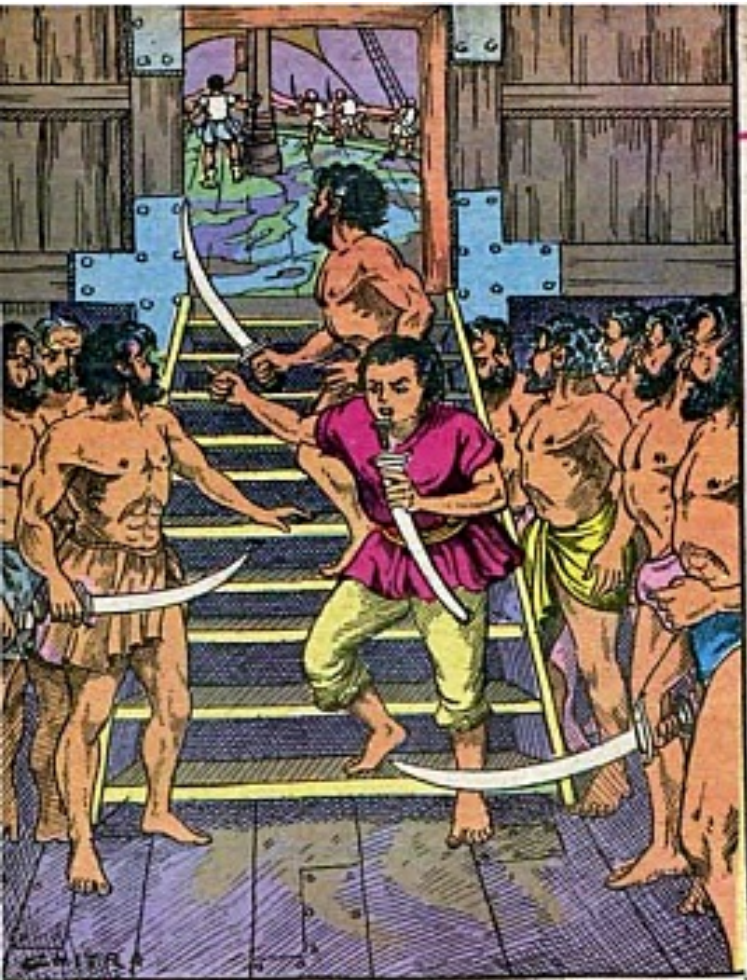
छोड कर दुश्मन के साथ लड़ाई लड़नी होगी। इस लड़ाई में हमें जरूर सफलता प्राप्त होगी। पर हमें किसी भी हालत में अपनी हिम्मत नहीं छोड़नी है। कायरता वीरों का लक्षण नहीं है। साहस पूर्वक लड़ते हुए जो वीर अपने प्राण त्याग देता है। उस को वीर गति प्राप्त होती है। ऐसे वीर स्वर्ग के अधिकारी हो जाते हैं। फिर भी मेरा विश्वास है कि इस लड़ाई में हमें जरूर जीत हासिल होगी !"

महा नाविक की बातों पर गुलामों को विश्वास नहीं हुआ। गुलाम यह भूले नहीं थे कि महा नाविक ने उन के साथ कैसा क्रूरता पूर्ण व्यवहार किया था। फिर भी इस हालत में प्रतिकार की भावना उचित नहीं थी। दुश्मन के जहाज से अग्नि से भरे अस्त्र आकर उनके जहाज पर गिर रहे थे। जहाज में आग लग जाने पर वह जलकर भस्म हो जाएगा और उसके साथ ही सभी गुलामों को जल में डूब कर मरना होगा। गुलामों के दिलों में ये संदेह उठ रहे थे। इस संदेह ने पिंगल के दिल को भी झकझोर दिया। पर वह शीघ्र ही एक निर्णय पर पहुँचा। उसने सोचा कि अपने जहाज की रक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है। पहले हमें अपने बाहरी शत्रु के साथ जूझना होगा। उस के हाथों में बन्दी बन जाने पर वह न केवल हमें सताएगा, बल्कि ज़िन्दगी भर हम से कस कर काम लेगा। यदि हम उस के साथ नहीं भी लड़ते हैं तो भी हमारी मौत निश्चित है। इस से अच्छा यह होगा कि हम लड़ते अपनी जान दे दें। पर दुष्ट महा नाविक का ज़िन्दा रहना भी खतरे से खाली नहीं है। सबसे पहले उसका अन्त करना होगा। इसके बाद शत्रु से समझौता करके जीवन-रक्षा का कोई उपाय करना होगा।

पिंगल ने यों विचार करके अपने साथी गुलामों को उनके कर्त्तव्य का बोध कराया। उसने यह भी बताया कि फिलहाल दुश्मन के जहाज की बात भूलकर सर्व प्रथम अपने जहाज के महा नाविक तथा उसके अनुचरों का अन्त करना सब प्रकार से हितकर होगा। सभी गुलामों ने पिंगल की बात मान ली। साहसी और समझदार युवक पिंगल के नेतृत्व को उन लोगों ने स्वीकार कर लिया।

पिंगल ने तत्काल समुद्र को प्रतिध्वनित करने वाली ध्वनि में चिल्लाकर कहा— "महा नाविक और उस के अनुचरों का संहार करो। आओ, आगे बढ़ो।" यह कहकर वह आगे कूद पड़ा।

सभी गुलाम एक साथ सिंहों की भांति गर्जन करते हुए तलवार खींच कर महा नाविक और उसके अनुचरों पर टूट पड़े।

महा नाविक ने कल्पना तक नहीं की थी कि हालत ऐसी नाज़ुक हो जाएगी। एक ओर दुश्मन का जहाज आग के शोले फेंकता हुआ समीप आ रहा था और दूसरी तरफ़ उसी के जहाज में बन्दी बने गुलामों ने उस पर हमला कर दिया।

"यह तो स्वामि द्रोह है, धोखा है, दगा है! पहले इन गुलामों का अन्त करो।" यों अपने अनुचरों को आदेश दे कर महा नाविक गुलामों का मुक़ाबला करने लगा। चालाक और शक्तिशाली महा नाविक की तलवार के वारों से पल भर में पाँच-छे गुलाम अपनी जान गँवा बैठे। इसे देख कुछ गुलाम भयकंपित हो पीछे की ओर भागने लगे।

पिंगल ने खतरे को भांप लिया। उसने दूसरे ही क्षण महा नाविक पर आक्रमण करके भागने वाले गुलामों को चेतावनी दी— "सुनो भाइयो, मैं महा नाविक को अपनी तलवार की बलि देता हूँ। तुम लोग यदि जान के डर से भाग जाओगे तो फिर समुद्र तुम लोगों की जान लेकर छोड़ेगा। इसलिए तुम लोग अपने प्रणों का मोह छोड़ कर अपनी स्वतंत्रता के लिए जी जान से लड़ो।"

पिंगल की चेतावनी ने भागने वाले गुलामों के दिलों में साहस और उत्साह पैदा कर दिया। इस बीच पिंगल ने सिंह शावक की तरह गर्जन करके महा नाविक का सामना किया। उस के वार से महा नाविक की छाती दहल उठी। महा नाविक "जय भैरवी।" चिल्लाता हुआ आग बरसाने वाले नयनों से पिंगल की ओर ताक कर उस पर टूट पड़ा। महा नाविक ने सोचा कि दुश्मन का सामना करने के पहले अपने आंतरिक शत्रु का अन्त करना हर प्रकार से आवश्यक है।

महा नाविक के शारीरिक बल और खड्ग युद्ध में कौशल को देख पिंगल विस्मय में आ गया। उसने अच्छी तरह से समझ लिया कि आमने-सामने रह कर महा नाविक के साथ युद्ध करना अपनी जान को मुसीबत में डालना है। इसलिए युक्ति से उस पर विजय प्राप्त करना आवश्यक है। ये ही सारी बातें सोच कर पिंगल झट उसके सामने से हट गया। पिंगल के हट जाने से उस का वार चूक गया, और उसके पैरों में एक रस्से के लिपट जाने से वह आगे की ओर झूम कर औंधे मुँह गिर गया। इस पर पिंगल को एक अच्छा मौक़ा मिल गया। वह भीषण गर्जन करता हुआ महा नाविक की पीठ पर तलवार भोंकने को जैसे ही आगे बढ़ा कि महा नाविक अपनी जान पर आई आफ़त को भाँप कर झट से बगल की ओर लुढ़क गया। फिर क्या था पिंगल की तलवार पास में पड़ी लकड़ी में चुभ कर दो टूक हो गई।

महा नाविक विकट अट्टहास कर उठा—"ओह, तुम शायद गुलामों के नेता हो। बेचारा नेता किस तरह आफ़त में फँस गया है। गुलामों ने तुम्हारे उकसाने से यह सोच कर मेरे विरुद्ध विद्रोह कर दिया कि तुम उन लोगों का सफलता पूर्वक नेतृत्व करोगे और उनको आजाद करोगे। बेचारे वे भोले-भाले तुम्हारे धोखे में आ गए। तुम्हें उनको भड़काने के अपराध का दण्ड भोगना पड़ेगा। मैं तुम को किसी हालत में प्राणों के साथ छोड़ना नहीं चाहता। अब तुम तैयार हो जाओ, मैं अपनी तलवार से तुम्हारे शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके समुद्र में फेंक दूँगा। इस के

बाद तुम्हारे सारे अनुचरों को....."

महा नाविक जोश और आवेश में भरा हुआ था, इसलिए उसने पिंगल की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। अपनी तलवार के टूटते ही पिंगल ने खतरे को भाँप लिया। दूसरी तलवार प्राप्त करने की उसने कोशिश की पर समीप में कोई तलवार न थी। उस के अनुचर बने गुलाम महा नाविक के अनुचरों के साथ बराबर लड़ रहे थे।

पिंगल ने बिजली की गति के साथ बगल में पड़े हुए एक रस्से को हाथ में लिया और उसके एक छोर को फंदे की तरह कस कर महा नाविक के हमले का सामना करने के लिए तैयार होकर खड़ा हो गया। क्रोध में महा नाविक चिल्लाते हुए पिंगल पर वार करने के लिए आगे बढ़ा। इस बीच पिंगल के हाथ का रस्सा साँप की तरह सनसनाते हुए महा नाविक के कंठ में फंदा बनकर कस गया। दूसरे ही क्षण पिगंल अपने हाथ के रस्से को जोर से खीचंते हुए पीछे की ओर भाग गया।

महा नाविक चीख कर एक विशाल वृक्ष की तरह धम्म से आगे की ओर गिर पड़ा। फिर भी वह अपने हाथ की तलवार से रस्से को काटने की कोशिश करने लगा। इसे देख कर पिंगल ने अपने अनुचरों को पुकारा। तत्काल दो गुलाम दौड़ते हुए आए, महा नाविक को नीचे गिरे हुए देख उस पर टूट पड़े और अपनी तलवारों से भोंक कर उसकी देह को पल भर में छलनी कर दिया।

पिंगल महा नाविक के साथ लड़ने में मशगूल था, इसलिए अपने चारों तरफ़ घटने
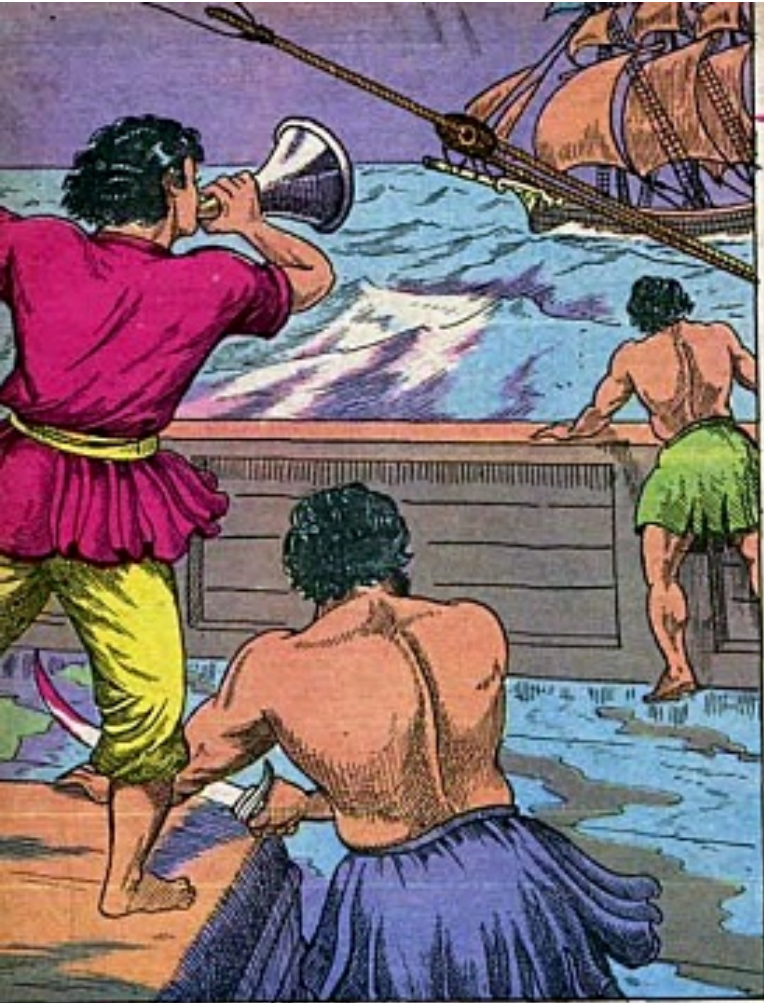
वाली घटनाओं से वह बिल्कुल अनभिज्ञ था। महा नाविक की मृत्यु के बाद वह एक गुलाम के हाथ से तलवार खींच कर जहाज के एक कोने में होने वाली लड़ाई को देख उस ओर भागा। वहाँ पहुँच कर पिंगल ने देखा कि महा नाविक के बचे खुचे अनुचर या तो मृत्यु को प्राप्त हो गए हैं या घायल होकर बन्दी बने हुए हैं

इस बीच दुश्मन के जहाज के सैनिक कोलाहल करते हुए पिंगल के जहाज के समीप पहुँच रहे थे। उन लोगों ने भाँप लिया कि दुश्मन के जहाज में कोई कलह पैदा हो गया है, इसलिए अब आसानी से उस पर क़ब्जा कर सकते हैं।

पिंगल को आगे के कार्यक्रम के बारे में कुछ नहीं सूझा। वह सोचने लगा कि दुश्मन के जहाज के सैनिकों के साथ लड़ना अपने थोड़े अनुचरों के लिए संभव न होगा। ऐसा न करके उनकी अधीनता को स्वीकार कर लें तो वे लोग उन्हें फिर बंदी बनाकर गुलाम बना सकते हैं। दर असल दुश्मन के जहाज में कितने खलासी हैं? शायद यह जान कर वह कुछ निर्णय ले सके।

पिंगल ने महा नाविक की दूरबीन ले ली थी। उसने उसकी मदद से दुश्मन के जहाज की ओर देखा। सारा जहाज खलासियों से खचाखच भरा था। पिंगल ने समझ लिया कि अब उनके साथ लड़ने से कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। उसे लगा कि तत्काल अपने जहाज पर सफ़ेद झण्डा फहरा कर अपनी हालत उस जहाज के मालिक को बता दी जाए और उन से समझौता करके अपने रास्ते चला जाना ही सब से उत्तम तरीक़ा है। लेकिन क्या वे लोग इस बात को मान लेंगे? उसे फिर इस बात का सन्देह हुआ।

यों विचार करके उसने निश्चय किया कि अपने जहाज पर दुश्मन के नाविकों को प्रवेश न करने दिया जाये और उसके जहाज को दूर पर ही रख कर समझौते का प्रयत्न किया जाये। उसी समय उस के आदेश पर जहाज के मश्तूल पर सफ़ेद झण्डा फहरा दिया गया। दूसरे ही क्षण दुश्मन के जहाज पर से जय जयकार सुनाई पड़ी।

पिंगल ने हाथ में तुरही लेकर दुश्मन के जहाज के लोगों को अपने जहाज के भीतर हुई घटनाओं का परिचय दिया— "भाइयो, आपके जहाज को रोक कर उस पर अधिकार करने का जो प्रयत्न किया गया, उसके साथ हमारा कोई वास्ता नहीं है। हम सब गुलामों ने अपने दुष्ट मालिक महा नाविक तथा उसके अनुचरों का संहार कर डाला और अब हम यही चाहते हैं कि अपने जहाज को किसी बन्दरगाह में ले जाकर वहाँ से अपने अपने देश को चले जाएँ। इसलिए आप लोग हमारे साथ समझौता करके दोस्ती का व्यवहार करें और अपने रास्ते चले जाएँ।"

ये बातें सुनते ही शत्रु के जहाज में हलचल मच गई। थोड़ी देर में जब कोलाहल बंद हुआ तब उस जहाज के भीतर से एक कठोर कंठ ध्वानि सुनाई पड़ी।

"गुलाम बने हुए तुम लोगों को स्वेच्छा पूर्वक समुद्र पर जहाज चलाने का हक़ नहीं है। तिस पर जहाज के मालिक तथा उस के अनुचरों का संहार करके तुम लोगों ने अक्षम्य अपराध किया है। इस के लिए तुम लोगों को दण्ड भोगना पड़ेगा। वरना तुम लोगों का अनुकरण करके हमारे जहाज के गुलाम भी एक न एक दिन हम लोगों का अंत कर सकते हैं। इसलिए तुम लोग लंगर डालकर चुपचाप हमारी अधीनता स्वीकार कर लो।"

यह घोषणा सुनकर पिंगल को आश्चर्य और भय दोनों हुआ। वह समझ गया कि व्यपारिक जहाज के नक़ाब में चलने वाला यह समुद्री डाकुओं का जहाज है। ऐसे जहाज के लोगों की अधीनता को स्वीकार करने का मतलब है कि पुनः उन लोगों के हाथ गुलामों के रूप में बिक जाना।

यह सोचकर पिंगल ने सारी हालत संक्षेप में अपने अनुचरों को बता दी। वे सब एक मत हो दुश्मन के साथ लड़ने को तैयार हो गये। सबने एक स्वर में यही उत्तर दिया कि दुश्मन के हाथ में बंदी बन कर ज़िंदगी भर गुलामी करने की अपेक्षा लड़ते हुए मर कर समुद्र में फिंकवाया जाना कहीं उत्तम है।

इस निर्णय के बाद जहाज के मस्तूल पर से

सफ़ेद झण्डा उतार दिया गया। जहाज के अन्दर से जयकार की ध्वनि गूंज उठी। संख्या की दृष्टि से उन से कहीं अधिक शत्रु सैनिक एक साथ अगर उन के जहाज में घुस पड़ें तो रक्षा के लिए कुछ नहीं किया जा सकता, इसलिए जहाँ तक हो सके, शत्रु के जहाज से दूर रह कर उन पर बाणों की वर्षा करते रहें, यदि ये सब उपाय कारगर न हों तो अपने जहाज को दुश्मन के जहाज के साथ टकरा दें। पिंगल ने इस प्रकार युद्ध करने का निश्चय किया।

लड़ाई फिर शुरू हुई। पिंगल के अनुचर, धनुष पर बाण चढ़ा कर दुश्मन के जहाज पर छोड़ने लगे उसी समय पिंगल ने जहाज को पीछे ले जाने को कहा। वह चाहता था कि दुश्मन के हमले से बचा कर अपने जहाज को जितना संभव हो दूर ले जाए। पर शीघ्र ही उसे मालूम हुआ कि दुश्मन के हमले से बचाकर भाग जाना संभव नहीं है। देखते-देखते दुश्मन का जहाज उसकी ओर तेजी के साथ बढ़ने लगा।

पिंगल हठात् एक निर्णय पर पहुँचा। "दुश्मन पर विजय प्राप्त करना है अथवा लड़ते-लड़ते वीर गीत को प्राप्त करना है" यही उसका निर्णय था। इस निर्णय पर पहुँचते ही पिंगल ने अपने अनुचरों को आदेश दिया— "तुम लोग हमारे जहाज को तेज गति के साथ आगे ले जाकर दुश्मन के जहाज से टकरा दो।" फिर क्या था, जहाज आगे की ओर बढ़ता गया। शत्रु सैनिक इसे देख पहले चकित हो गए। फिर कुछ ही क्षणों में पिंगल की योजना को समझकर डर के मारे कांपते हुए हाहाकार मचाने लगे।

देखते-देखते पिंगल का जहाज वायु गति से आगे बढ़ कर दुश्मन के जहाज से टकरा गया। दूसरे ही क्षण अनेक कंठों का आर्तनाद समुद्र पर प्रतिध्वनित हो उठा।

दोनों जहाजों के टकराने से जहाजों में भारी कम्पन हुआ। उसकी वजह से पिंगल अपनी जगह से हवा में उड़ गया और इस तरह समुद्र में जा गिरा मानो कोई उस को ऊपर उठा कर सारी ताक़त लगा करके दूर फेंक दिया हो।

क्रमश

लोभ का फल

आधी रात का समय था। चारों तरफ़ गहरा अंधकार छाया हुआ था। आंधी और वर्षा जोर पकड़ती जा रही थी। प्रचण्ड वायु के झोंकों से पेड़ों के तने काँप रहे थे। उस भयंकर वातावरण में भी साहसी विक्रम एक पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाले श्मशान की ओर चल पड़े। उस समय शव में स्थित बेताल ने पूछा— "राजन, आप की यह दृढ़ लगन और कार्य साधना के प्रति गहरे विश्वास को देख कर मेरे मन में यह शंका हो रही है कि आप किन्हीं अपूर्व शक्तियों को प्राप्त करने के लिए यह श्रम उठा रहे हैं। बात यह है कि मंत्र-तंत्र के द्वारा उन शक्तियों को प्राप्त करना अत्यंत कठिन है। यदि उन शक्तियों को प्राप्त कर भी लिया तो उन को अपने लाभ के हेतु काम में लाना और भी कठिन है। इस की चेतावनी के रूप में मैं आप को रामशर्मा और कृष्णशर्मा नामक पिता-पुत्र की एक कहानी सुनाता हूँ। ध्यान से सुनिये,

बेताल कथा

आपकी, मार्ग की थकावट भी शायद दूर हो जाए ।"

बेताल यों कहकर कहानी सुनाने लगाः वैशाली नगर में रामशर्मा नामक एक पुरोहित ब्राह्मण रहता था । पुरोहिताई में उसकी बड़ी अच्छी आमदनी होती थी । उस का परिवार भी छोटा था । उस के परिवार में उसके अलावा उस की पत्नी, एक पुत्र और एक पुत्री-कुल तीन प्राणी और थे ।

बिना किसी प्रकार की आर्थिक कठिनाई के रामशर्मा का जीवन व्यतीत हो रहा था । फिर भी उसके मन में कोई असंतोष घर कर गया था । वह राजसभा के अधिकारी, कवि और पंडितों का वैभव देख कर मन ही मन उन से ईर्ष्या करता था । इसलिए वह बराबर यही सोचता रहता कि वह भी किसी प्रकार से राजा का आश्रय प्राप्त कर ले तो वह धन-संपत्ति, महल और वाहन के साथ वैभव पूर्ण जीवन बिता सकता है ।

रामशर्मा का पुत्र वयस्क होकर पुरोहिताई में अपने पिता की मदद करने लगा । उस हालत में रामशर्मा के दिमाग में अचानक एक युक्ति सूझी । यदि वह हिमालय में जाकर वहाँ पर रहने वाले सिद्धों के द्वारा किन्हीं अपूर्व शक्तियों को प्राप्त कर ले तो वह भी कुछ क्षणों में बहुत धनवान बन सकता है ।

रामशर्मा यों विचार करके एक दिन घर में किसी को बताये बिना हिमालय पर चला गया । वहाँ पर एक सिद्ध योगी के आश्रम में रहकर भक्ति और श्रद्धा के साथ उसकी सेवा करते हुए उसकी कृपा का पात्र बन गया ।

सिद्ध ने रामशर्मा के आगमन का उद्देश्य भांप लिया और एक दिन उस से कहा— "वत्स, तुम एक गृहस्थ हो, तुम्हारी पुत्री और पुत्र के विवाह की जिम्मेदारी तुम पर है । इसलिए तुम घर लौट जाओ । तुमने आज तक बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ मेरी सेवा की है । इसलिए तुम कोई कामना रखते हो तो मुझ से बता दो । मैं उसकी पूर्ति कर दूँगा ।"

इस पर रामशर्मा ने कहा— "स्वामि, मुझे कोई ऐसे मंत्र का उपदेश दीजिए जिस से मैं अपूर्व शक्तियाँ प्राप्त कर लूँ ।"

सिद्ध ने मान लिया और कहा— "वत्स, मैं तुम्हें एक मंत्र का उपदेश देता हूँ। उस मंत्र के प्रभाव से कुछ अपूर्व शक्तियाँ तुम्हारे वश में रहेंगी। तुम कभी धन संपत्ति के मोह में पड़ कर उस का गुलाम मत बनना। मंत्रशक्ति का उपयोग जनता की भलाई के लिए करना।" इस प्रकार चेतावनी देकर योगी ने रामशर्मा को मंत्र का उपदेश दे दिया।

रामशर्मा अपने घर लौट आया। उसकी अनुपस्थिति में उस का पुत्र कृष्णशर्मा पुरोहिताई करके परिवार का खर्च किसी न किसी तरह चला लेता था।

रामशर्मा जब लौट कर अपने घर पहुँचा तब वैशाली राज्य में भयंकर अकाल का तांडव हो रहा था। जनता नाना प्रकार की यातनाएँ झेल रही थी। उसके दो साल पूर्व से ही उस राज्य में वर्षा नहीं हुई थी। राजा ने वर्षा के लिए अनेक रुद्र याग और वरुण-जाप करवाये। पर कोई लाभ नहीं हुआ। इस पर राजा ने घोषणा करवाई— "अगर कोई अपनी शक्ति या युक्ति के द्वारा राज्य भर में वर्षा करा दे तो उस का स्वर्णाभिषेक करूँगा।"

स्वर्णाभिषेक की बात सुनते ही रामशर्मा का उत्साह बढ़ गया। अपने पुत्र को बुला कर वह गुप्त रूप से बोला— "बेटा, मैं कई तकलीफ़ें झेल कर हिमालय पर चला गया था। वहाँ पर एक सिद्ध ने मुझ को एक मंत्र का उपदेश दिया है। उस मंत्र के प्रभाव से मैं राज्य में पानी बरसा सकता हूँ। तुम्हें शायद मालूम होगा कि राजा ने वर्षा करने वाले का स्वर्णाभिषेक करने की घोषणा की है। इस से दो लाभ एक साथ सिद्ध हो सकते हैं— एक तो हमारे राज्य का कल्याण होगा और दूसरे धन संपत्ति के साथ सारे राज्य में हमारा सम्मान भी बढ़ेगा।"

अपने पिता की बातें सुन कर कृष्ण शर्मा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उस ने प्रसन्न होकर पूछा— "क्या आप सचमुच मंत्र के प्रभाव से पानी बरसा सकते हैं? जनता जल के अभाव में नाना यातनाएँ झेल रही है। आप तत्काल पानी बरसा कर राज्य का कल्याण कीजिए।"

"राज्य के कल्याण की बात तो है, पर हमारे कल्याण की क्या बात है? पहले ही राजा को

सूचित किए बिना मैं पानी बरसा दूँ तो राजा कैसे विश्वास करेंगे कि मैं ने ही पानी बरसाया है ? ऐसी हालत में उन्होंने स्वर्णाभिषेक की जो घोषणा की है, उस से मैं वंचित रह जाऊँगा। इसलिए हमें पहले राजा को इस बात की सूचना देनी होगी कि हम सारे राज्य में पानी बरसा सकते हैं। तब वे हमारी मंत्र-शक्ति पर विश्वास करके अपने वचन का पालन करेंगे।" रामशर्मा कहा।

कृष्णशर्मा कभी अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध व्यवहार नहीं करता था। पर इस बार उस ने साहस बटोर कर कहा— "पिताजी, हम लोग अपने पेशे के द्वारा सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं, ऐसी हालत में स्वर्णाभिषेक से हमारा क्या प्रयोजन है ?"

अपने पुत्र का उत्तर सुन कर रामशर्मा क्रोधित हो उठा और बोला— "तुम्हें तो दुनियादारी का अधिक अनुभव नहीं है। मेरा कहा मान लो।" यों पुत्र को डाँट कर फिर बोला— "सिद्ध ने मुझे जिस मंत्र का उपदेश दिया है, उसे तुम्हें भी सीख लेना ज़्यादा उत्तम होगा।" यों समझा कर उस ने कृष्णशर्मा को मंत्रोपदेश दिया।

"बेटा, तुम स्नान करके ईश्वर का ध्यान करो। तदनंतर उत्तर की दिशा में एक पैर पर खड़े हो जाओ। इसके बाद जब तुम तीन बार इस मंत्र का पाठ करोगे तो वर्षा हो जाएगी। यदि तुम को वर्षा बंद करवानी है तो उसी पद्धति में वापसी मंत्र का तीन बार पठन करना होगा।" यों कह कर वह उसी वक्त राजसभा की ओर
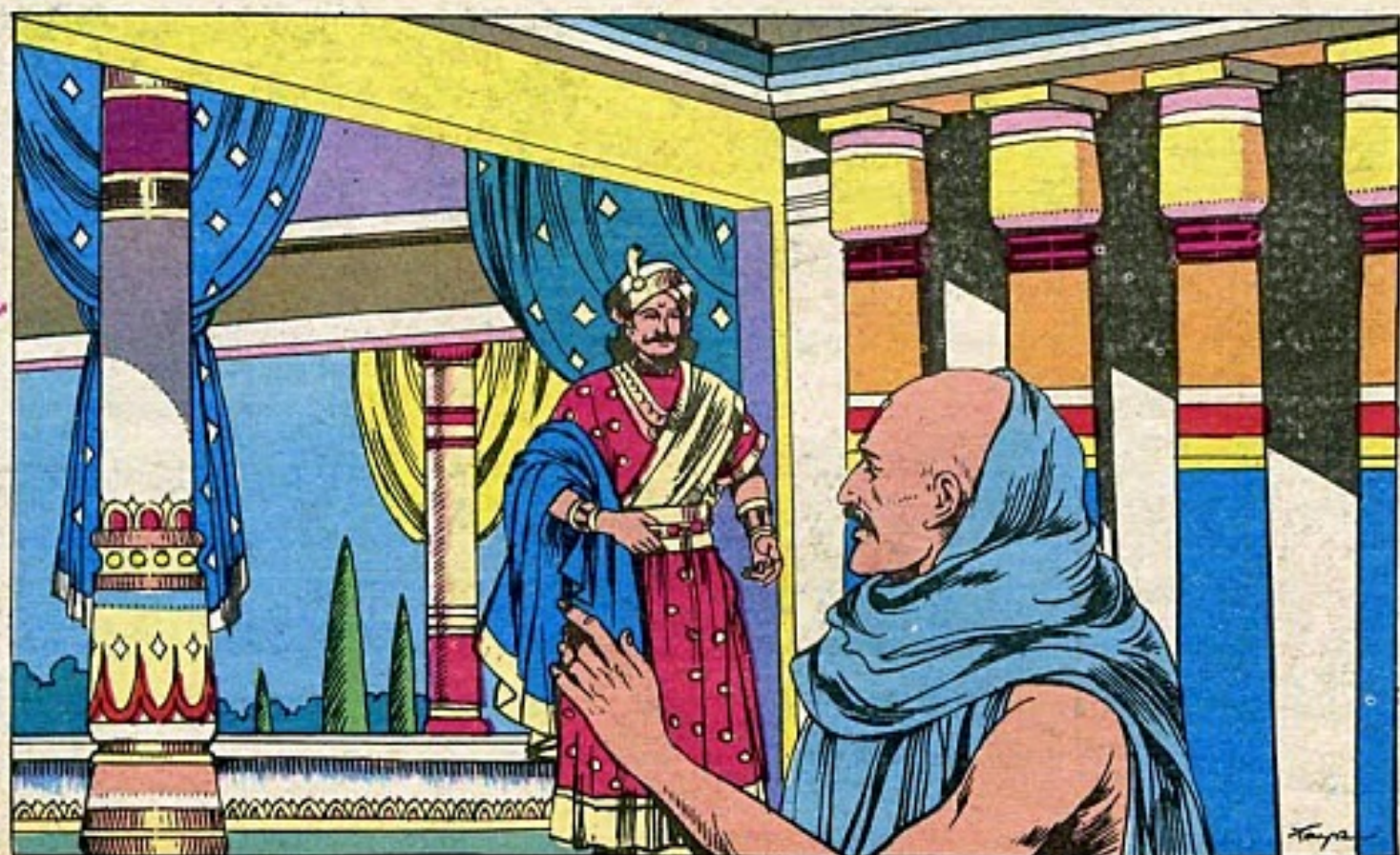
चल पड़ा ।

राजा रामशर्मा की बातें सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला— "पंडित जी, आप तत्काल पानी बरसाइये । आप को विदित ही होगा कि मैं ने पानी बरसाने वाले का स्वर्णाभिषेक करने की घोषणा की है । विश्वास रखिए कि निश्चय ही मैं अपने वचन का पालन करूँगा ।"

इसके बाद रामशर्मा वैशाली नगर की उत्तरी दिशा में एक तालाब की मेंड़ पर स्थित शिवजी के मन्दिर में गया । उसने सब से पहले तालाब में स्नान किया । तब उस की मेंड़ पर उत्तर की ओर मुँह कर के खड़े हो कर तीन बार मंत्र का पठन किया । उसी समय वैशाली राज्य में काले बादल छा गए । पृथ्वी को कंपा देने वाले प्रभंजन के साथ वर्षा होने लगी । रामशर्मा प्रसन्नता पूर्वक शिव मंदिर के अन्दर चला गया। नगर की जनता आनन्दातिरेक में घर से बाहर निकल कर गलियों में नाचने लगी ।

राजा अपने परिवार के साथ वर्षा में भीगते हुए शिव मन्दिर में आए और हाथ जोड़ कर राम शर्मा से बोले— "महानुभाव, आप के अनुग्रह से वर्षा हुई और देश की रक्षा हुई है । वर्षा को रोकने के लिए जब तक मैं खबर न भेजूँ तब तक इसी प्रकार बारिश होने दीजिए ।" यों कह कर एक भारी सोने की थाल में स्वर्ण मुद्राएँ और नवरत्न राजा ने भर दिए और उस थाल को रामशर्मा के हाथ देकर अपने महल को लौट आए ।

मंदिर के बाहर प्रलयंकारी भीषण गर्जन के साथ वर्षा हो रही थी, और भीतर रामशर्मा
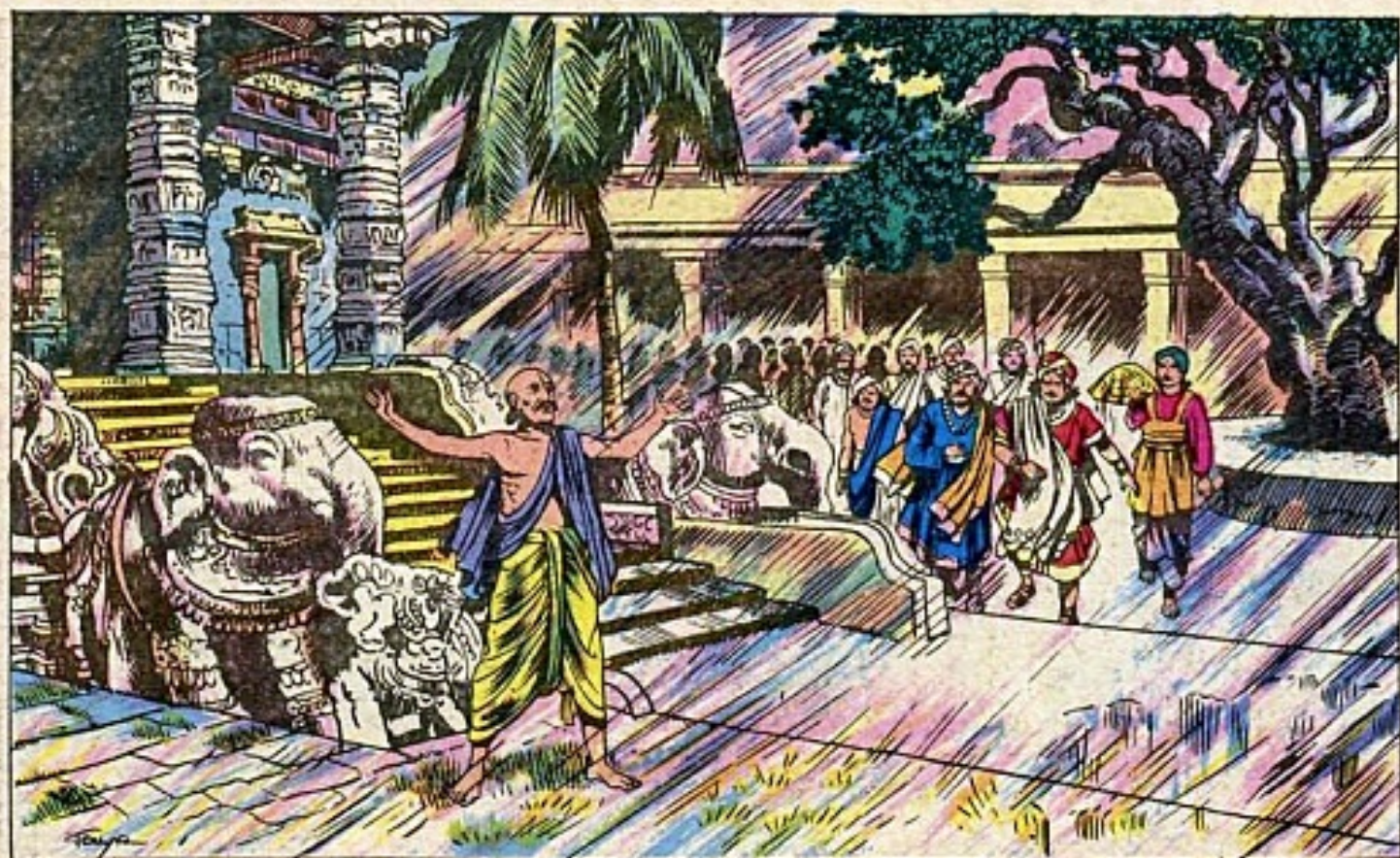
अकेले ही बैठ कर राजा से प्राप्त स्वर्ण मुद्राओं और नवरत्नों की गिनती कर रहा था। उस की आँखें उस द्रव्य को पाकर चमक रही थीं। उसी वक्त चार डाकू मंदिर में घुस पड़े, और राम शर्मा की हत्या करके उस संपत्ति को उठा ले गए।

उस दिन शाम तक वर्षा होती ही रही। राजा ने मंत्री से परामर्श किया, तब वे इस निर्णय पर पहुँचे कि उस समय तक राज्य भर में जो बारिश हुई, वह पर्याप्त है। इस के बाद उन्होंने यह समाचार देने के लिए मंत्री को रामशर्मा के पास भेज दिया। वहाँ पर मंत्री ने देखा कि रामशर्मा की हत्या हो गई है।

मंत्री ने राजमहल में लौटकर कर यह समाचार राजा को दिया। राजा यह खबर सुन कर बहुत दुखी हुए। तब यह सोचकर उन्होंने मंत्री को रामशर्मा के घर भेज दिया कि शायद इस जल प्रलय को रोकने में रामशर्मा का पुत्र कोई मदद पहुँचा सके।

कृष्णशर्मा अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर अत्यंत दुखी हुआ। उसकी माँ और बहन के दुख की कोई सीमा न रही। इस पर मंत्री ने उन्हें समझाया— "तुम लोग शांत हो जाओ। वर्षा के अभाव में मरुभूमि बनने वाले वैशाली राज्य को रामशर्मा ने अपने मंत्र के बल से बचाया। हत्यारों की वजह से तुम्हारे परिवार को ही नहीं बल्कि सारे राज्य के लिए अपार क्षति हुई है। अब हमारे सामने यह सवाल है कि इस समय पूरे राज्य में होने वाले जलप्रलय से रक्षा करने की जिम्मेदारी रामशर्मा के इकलौते पुत्र की है।"

थोड़ी देर में कृष्णशर्मा ने अपने दुख पर नियंत्रण किया, फिर अपने ही मकान की ड्योढ़ी पर एक पैर पर उत्तर दिशा की तरफ़ अभिमुख हो खड़े होकर उसने वर्षा के बंद होने का मंत्र तीन बार पढ़ा। तक्षण वह मूसलधार वर्षा बंद हो गई।

मंत्री ने अपना मस्तक झुका कर कृष्णशर्मा को प्रणाम किया और कहा— "कल भरी राजसभा में राजा आप का सम्मान आप के पिता के सम्मान से भी कहीं ज्यादा बड़े पैमाने पर करना चाहते हैं। मैं स्वयं कल प्रातः काल आप को हाथी के हौदे पर बिठा कर ले जाने के लिए

यहाँ पर आ जाऊँगा।" यों कह कर मंत्री चला गया ।

दूसरे दिन प्रातः काल मंत्री हाथी के हौदे के साथ दल-बल सहित कृष्णशर्मा के घर पहुँचा, पर वहाँ मकान के किवाड़ों पर ताला लगा देख आश्चर्य चकित हुए और साथ ही उन्हें दुख भी हुआ ।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा— "राजन, कृष्णशर्मा राज-सम्मान का तिरस्कार करके अपना घर छोड़कर किसी अज्ञात प्रदेश में चला गया। इसका कारण क्या है ? उसके पिता ने काफी श्रम उठा कर जो मंत्र शक्ति प्राप्त की वह इस समय कृष्णशर्मा के वश में थी। साथ ही राजा से प्राप्त होने वाले अपार धन को लेकर वह अपना सारा जीवन सुखपूर्वक बिता सकता था। क्या इस डर से वह नगर छोड़ कर भाग गया कि संपत्ति के लालच में डाकू उस की भी हत्या कर डालेंगे ? या कोई दूसरा कारण था ? इस संदेह का समाधान जान कर भी आप न देंगे तो याद रखिए कि आप का सर धड़ से अलग हो जाएगा ।"

इस पर विक्रम ने बताया— "कृष्णशर्मा अपने पिता के समान अधिक महत्वाकांक्षी नहीं था। बल्कि उसके पास जो कुछ था उसी से वह संतुष्ट रहने वाला था। उसने अपने पिता से जो बातें कहीं, उन्हीं से हमें उस का वह उद्देश्य मालूम होता है। कृष्णशर्मा धनसंपत्ति के प्रति अधिक मोह रखने वाला व्यक्ति नहीं था । इसलिए वह अपने पिता के द्वारा प्राप्त मंत्र-शक्ति का उपयोग कभी भी जनता के कल्याण के कार्यों में कर सकता था। उस की आवश्यकता फिलहाल वैशाली नगर के लिए नहीं थी। धन जोड़ने की प्रवृत्ति उसके अन्दर बिलकुल नहीं थी, इसलिए डाकुओं का भय भी उसे सता नहीं सकता था। इन्हीं कारणों से वह राजा के द्वारा प्राप्त होने वाले धन के लोभ में न पड़ कर परिवार के साथ वह किसी अज्ञात प्रदेश में चला गया ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

वैद्य की होशियारी

वैद्य अनंताचार्य एक दिन अपनी पुत्री का रिश्ता करने के विचार से अपने पड़ोसी गाँव गया। वहाँ पर उसे अपने गाँव के एक आदमी से मुलाक़ात हो गई। उसने कहा कि उसके गाँव का जमीन्दार रामसिंह बुखार से पीड़ित है। यह ख़बर सुनते ही अनन्ताचार्य तुरन्त मोल भाव तक किये बिना घोड़ा गाड़ी वाले के हाथ एक रुपया धर कर नदी के घाट तक पहुँचा।

नदी में बाढ़ आई हुई थी। मल्लाह थोड़ी ज्यादा रक़म वसूल करने के ख्याल से नदी पार कराने में आना-कानी करने लगा। इस पर वैद्य ने मल्लाह को आधा रुपया अधिक किराया देने का लोभ दिखाया और नदी पार करके अपने गाँव पहुँचा।

घर पहुँचते ही दवाइयों की पेटी लेकर जमीन्दार रामसिंह के घर गया। रामसिंह खाट पर लेटे कराह रहे थे। आचार्य ने जल्दी-जल्दी कोई दवा उसके मुँह में डाल दी और संध्या समय तक फिर वह पड़ोसी गाँव में आ पहुँचा।

यह खबर सुन कर गाँव वाले वैद्य की तारीफ़ करते हुए बोले— "वैद्यजी, आज के जमाने में मरीज़ों के प्रति आप जैसे लगन वाले और अपने पेशे के प्रति आदर रखने वाले लोग इने गिने ही होते हैं।"

वैद्य थोड़ी देर तक उनकी तारीफ़ सुनता रहा, फिर तपाक से बोला— "लगन और आदर की बात रहने दीजिए। दर असल बात यह है कि मैं अगर जल्दी पहुँच कर कोई न कोई दवा न दूँ तो रामसिंह बिना दवा के ही स्वस्थ हो जाते हैं। इसके पूर्व दो बार ऐसा ही हुआ था। अब मैं उन्हें दवा दे आया हूँ। इसलिए इलाज का ख़र्च उनसे वसूल करने में मुझे कोई तक़लीफ़ न होगी।"

ईश्वर की परीक्षा

देव नगर में शिवदास नाम का एक बहुत बड़ा भक्त रहता था। वह पड़ोसी गाँवों में घूम-घूम कर भक्ति पर उपदेश किया करता था और प्रभु की महिमा का गुण-गान किया करता था। एक दिन उसने अपने पड़ोसी गाँव राम नगर में इस प्रकार उपदेश दिया—

"ईश्वर जिन प्राणियों की सृष्टि करते हैं, उन सबके लिए आहार पहले से तैयार रखते हैं। माता के गर्भ से जब शिशु जन्म लेता है, तब उसके लिए माता का दूध पहले से तैयार रहता है। चींटी जैसे छोटे प्राणियों के भोजन का भी वे ही प्रबन्ध करते हैं। वे किसी प्राणी को भी आहार के बिना नष्ट होने नहीं देते। प्रत्येक प्राणी को किसी न किसी रूप में अवश्य खिलाते हैं।"

सभी लोग बड़ी प्रसन्नता और रुचि के साथ उसके उपदेश सुन रहे थे और श्रद्धा के साथ उनकी बातों पर विश्वास करके आनन्द ले रहे थे। लेकिन श्रोताओं में सुदर्शन नामक एक व्यक्ति को उनकी बात पर सन्देह हुआ। उसने खड़े होकर भक्त से पूछा— "लेकिन ईश्वर उसे कैसे खिला सकते हैं जो हठ करके स्वयं नहीं खाना चाहता हो ?"

"उसके लिए यह कोई बड़ी बात नहीं बेटे। वह चाहे तो उसे भी खिला सकता है। कोई लाख कोशिश करे, पर अन्त में ईश्वर की ही जीत होती है।" भक्त शिवदास ने उत्तर दीया।

सुदर्शन बहुत ज़िद्दी स्वभाव का था। वह इस बात को स्वयं जाँचना चाहता था, इसलिए उसने उस दिन से नहीं खाने का फ़ैसला कर लिया। उसने मन ही मन विचार किया— "आखिर ईश्वर की परीक्षा करके देखें कि वे मुझे कैसे खिलाते हैं।"

जब वह घर पहुँचा तो पत्नी ने भोजन परोस कर उसे खाने के लिए बुलाया।

"मुझे भूख नहीं है। मैं आज भोजन नहीं

(चन्दामामा में २५ वर्ष पूर्व प्रकाशित कहानी)

करूँगा।" सुदर्शन थोड़ा खीझ कर बोला।

पत्नी ने अनुरोध करते हुए कहा— "आप की पसन्द की करेले की सब्जी बनी है। थोड़ा-सा खा लें!"

"मैंने कहा न कि भूख नहीं है। फिर हठ क्यों करती हो?" सुदर्शन ने इस बार पत्नी को डाँट दिया।

उस समय उसके बच्चे भी खाना खा रहे थे। वे भी अपने पिता को खाने के लिए तंग करने लगे। जब सुदर्शन ने बच्चों से भी मना कर दिया तब उन्होंने ज़बरदस्ती उसके मुँह में एक कौर ठूँस दिया।

सुदर्शन ने सोचा कि घर पर उसके प्रण का पालन करना कठिन होगा। इसलिए वह गाँव के किनारे जाकर एक पेड़ के नीचे बैठ गया।

उस गाँव की एक बहू के शरीर में एक भूतनी प्रवेश कर गई थी, जिसे उतारने के लिए ओझा बुलाया गया। पड़ोसी गाँव से ओझा ने एक घड़े और मंत्र से भूत उतार कर घड़े को तथा स्वादिष्ट व्यंजन और पकवान गाँव के किनारे के बरगद वृक्ष के नीचे रख आने का परामर्श दिया। बहू के परिवार वालों ने ऐसा ही किया।

सुदर्शन उस वृक्ष के समीप ही बैठा था। उसके पेट में चूहे कूद रहे थे और व्यंजन की स्वादिष्ट गन्ध से उसके मुँह में पानी आ रहा था। फिर भी ईश्वर की परीक्षा लेने के लिए उसने किसी तरह अपनी भूख और जीभ पर क़ाबू रखा।

आधी रात हो गई फिर भी वह अपनी भूख दबाकर बैठा रहा। रात के तीसरे पहर कुछ चोर चोरी करने के बाद चोरी का माल बाँटने के लिए उसी बरगद के वृक्ष के नीचे पहुँचे। स्वादिष्ट भोजन देख कर उन सब का मन भी ललचा गया, लेकिन उस निर्जन स्थान में स्वादिष्ट ताज़ा भोजन देख कर उन्हें कुछ सन्देह हुआ। लेकिन कुछ चोरों को बहुत भूख लगी हुई थी, इसलिए बिना किसी बात की चिन्ता किये वे भोजन पर टूट पड़े।

"तुम लोग जल्दबाज़ी में पकवान के लालच में आकर खतरा मोल मत लो। यह हो न हो ज़हर मिला हुआ भोजन है। लगता है

किसी ने हम लोगों को मार कर हमारी सम्पत्ति हड़पने की चाल चली है। वह अवश्य ही यहीं कहीं छिपा होगा। पहले सावधानी से इस बात की छानबीन कर लो। फिर यह भोजन खाना।" कुछ अन्य चोरों ने उन्हें सावधान करते हुए कहा।

इस पर कुछ चोरों ने वृक्ष के आस-पास खोज बीन शुरू कर दी। अचानक उनकी नज़र एक पेड़ की जड़ से लग कर बैठे हुए सुदर्शन पर पड़ी। उनका शक सही निकला, वे ऐसा समझने लगे। इसलिए सुदर्शन को डाँटते-फटकारते हुए वे सब कहने लगे— "तो तुमने ही ज़हर मिला कर यहाँ भोजन रख दिया है ताकि हम सब इस भोजन को खाकर मर जायें और तुम हमारी सम्पत्ति हड़प लो। दुष्ट कहीं के! अब तुम्हें ही यह भोजन पहले खाना होगा।"

लेकिन सुदर्शन ने भोलेपन से जवाब देते हुए उन लोगों से कहा— "मुझे स्वादिष्ट भोजन के बारे में कुछ नहीं मालूम। मैं किसी अन्य उद्देश्य से यहाँ बैठा हुआ हूँ। मैंने उपवास का व्रत रखा है इसलिए मैं कुछ नहीं खाऊँगा।"

सुदर्शन का यह उत्तर सुन कर चोरों का सन्देह और पक्का हो गया। इसलिए चोरों ने उसे पहले खूब पीटा। फिर भी सुदर्शन भोजन करने को तैयार न था, इसलिए चोरों ने गुस्से में आकर ज़बरदस्ती वह भोजन उसके मुँह में डाल दिया। सुदर्शन को लाचार होकर मुँह में डाला हुआ कौर चबा कर निगलना ही पड़ा।

भोजन खाने के बाद भी जब सुदर्शन नहीं मरा तब चोरों ने भी बचा हुआ खाना खा लिया। इसके बाद चोरी का माल बाँट कर वे अपने रास्ते चले गये।

"आखिर ईश्वर की जीत हुई। मैं ने खाना न खाने का प्रण किया था, लेकिन मैं उस का पालन न कर सका। भक्त शिवदास ठीक ही कहते थे।" यह सोचता हुआ सुदर्शन अन्धेरे में ही कराहता और पैर घसीटता हुआ अपने घर की ओर चल पड़ा।

अनोखे सपने

बहुत समय की बात है। कोशल देश पर बिंबिसार का राज था।

एक रात राजा बिंबिसार ने विचित्र सपने देखे। उन सपनों का अर्थ उन्हें समझ में नहीं आया। वे रात भर परेशान थे। क्यों कि महाराजा ने आज तक ऐसे अनोखे सपने नहीं देखे। उन्हें इस बात का डर सताने लगा कि कहीं इन सपनों का अर्थ अनर्थकारी न हो। इसलिए प्रातःकाल होते ही उन्होंने विद्वान ब्राह्मणों को बुला कर उनका रहस्य जानना चाहा।

ब्राह्मण यह सुन कर बड़े प्रसन्न हुए। उनहोंने सोचा कि यह राजा से अधिक से अधिक धन ऐंठने का सुनहला मौक़ा है। इससे पूरा लाभ उठाना चाहिए। यह सब सोच विचार कर ब्राह्मणों ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि राजा को इन सपनों का ऐसा अर्थ बता दें जिस से उनका पूरा लाभ हो। इसलिए सब ने एक मत होकर राजा से निवेदन किया— "महाराज, ये सपने तो ऐसे गंभीर हैं जिनका अर्थ तुरन्त बताया नहीं जा सकता। हम इनके बारे में सपनों से सम्बन्धित ग्रन्थों को पढ़ कर इनका सही अर्थ निकालेंगे। तब आपके इन सपनों का सच्चा अर्थ बतायेंगे। इसलिए आप कृपया हमें दो-चार दिन का मौक़ा दे दीजिए।"

राजा ने ब्राह्मणों को एक सप्ताह की मोहलत दी। उस अवधि के समाप्त होते ही ब्राह्मण राजा के पास जाकर बोले— "हम सब ने आप के सपनों पर बहुत विचार-विमर्श किया तथा कई ग्रन्थों की सहायता से उन पर शोध किया। अन्त में हम सब उस निर्णय पर पहुँचे हैं कि ये सपने बड़े अशुभ हैं और किसी विपत्ति के सूचक हैं। आप के परिवार और राज्य में कोई अनर्थ होनेवाला है।"

राजा यह सुन कर बेचैन हो उठे! चिंतित होकर बोले— "इस अनर्थ को रोकने का कोई

(जातक कथा)

उपाय तो होगा ? आप लोग पुनः विचार करके हमारा उचित मार्ग-दर्शन कीजिए !''

''हाँ महाराज ! हमने इस पर भी विचार किया है। इस विपत्ति को टालने का बस एक ही उपाय है ! आप को देश के हर चौराहे पर यज्ञ कराना होगा और यज्ञ की समाप्ति पर ब्राह्मणों को भोज और मुँहमांगा दक्षिणा देनी होगी । इससे आने वाली आपत्ति टल जायेगी और सारे देश का कल्याण होगा ।'' ब्राह्मणों ने राजा को सलाह दी ।

राजा बिंबिसार ने ब्राह्मणों के परामर्श के अनुसार कोषाध्यक्ष को यज्ञ कराने का आदेश दे दिया ।

महारानी बड़ी समझदार और बद्धिमति थीं । उन्होंने ब्राह्मणों के परामर्श पर विश्वास नहीं किया । इसलिए उन्होंने यह समाचार सुन कर राजा से निवेदन किया— ''आप जल्दी में इन सपनों के बारे में कोई निर्णय नहीं लें । वास्तव में ये ब्राह्मण विद्वान नहीं लगते । समस्त विद्याओं के ज्ञाता भगवान बुद्ध आजकल जेतवन में ठहरे हुए हैं । आप कृपया उनकी सेवा में पहुँच कर अपने सपनों का हाल बताइए और वे जैसा आदेश दें, वैसा ही कीजिए ।''

महाराजा ने महारानी की सलाह मान ली । वे स्वयं राज्य के अधिकारियों के साथ जेतवन पहुँचे और भगवान बुद्ध को भिक्षा के लिए अपने राज महल में निमन्त्रित किया ।

भगवान बुद्ध के पधारते ही राजा ने निवेदन किया— ''भगवान ! आप सर्वज्ञ हैं । आप के लिए कुछ भी रहस्य नहीं है । मैंने कुछ अनर्थकारी विचित्र सपने देखे हैं और इस कारण मैं बहुत चिंतित हूँ । कृपया इन सपनों का अर्थ बता कर आने वाली विपत्ति से मेरी और प्रजा की रक्षा करें प्रभु !''

''राजन, आप अपने सपनों का वृत्तान्त बताइए । फिर मैं उनका रहस्य बताऊँगा ।'' भगवान बुद्ध ने राजा के भोलेपन पर मुस्कुराते हुए कहा ।

''सबसे पहले मैंने चार भैंसें देखे । वे रंभाते हुए और आपस में लड़ते हुए राजमहल में घुस आये । कई लोग उन भैंसों की लड़ाई देखने के लिए वहाँ पर एकत्र हो गये । परन्तु उसके बाद

भैंसें लड़ना छोड़कर अपने अपने रास्ते चले गये। इसका क्या अर्थ हुआ भगवान !" राजा ने अपना सपना सुना कर निवेदन किया।

"इस सपने का आप से और आप की पीढ़ी से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस सपने का अर्थ यह है कि आप के वंश के बाद आने वाले युग में राजा पापी हो जायेंगे। उनके राज्य काल में आसमान में बादल तो छा जायेंगे लेकिन बिना वर्षा किये लौट जायेंगे, जिससे जनता को निराशा होगी।" बुद्ध ने सपने का अर्थ समझाया।

"भगवान ! इसके बाद मैंने एक और विचित्र सपना देखा। मैंने छोटे पौधों में ही पूरी ऊँचाई तक बढ़े बिना मंजरी लगी देखी और उनमें फल भी लगे देखे। क्या इसका भी कोई रहस्य है प्रभु ?" राजा ने दूसरा सपना बुद्ध को बताया।

"यह स्वप्न भी उसी युग से सम्बन्धित है। उस युग में लड़कियों के बाल विवाह होंगे और वयस्क होने के पूर्व ही वे माता बन जायेंगी। इस सपने का बस यही अर्थ है।" बुद्ध ने बड़े सहज भाव से बताया।

राजा ने एक और सपना बताते हुए कहा— "भगवान, मैंने बछड़ों के पास गायों को दूध पीते देखा।"

"आने वाले युग में बड़े-बूढ़े लोग अपना पेट भरने के लिए अपने छोटों पर निर्भर करेंगे। इस सपने का अर्थ यह है।" भगवान बुद्ध ने स्पष्ट किया।

राजा ने सन्तुष्ट होकर अपना अगला सपना बताया— "एक सपने में मैंने यह देखा कि किसान मजबूत बैलों को जुए से हटा कर उनकी जगह बछड़ों को बाँध रहे हैं।"

"उस युग में राजा योग्य मंत्रियों को हटा कर अनुभव हीन और अयोग्य व्यक्तियों को उनके स्थान पर नियुक्त करेंगे। यह सपना यही संकेत करता है।" भगवान बुद्ध ने स्पष्ट बताया।

"इसके बाद मैंने एक विचित्र घोड़ा देखा। उसके दोनों तरफ़ मुँह थे। वह दोनों मुँहों से दाना खा रहा था। इस विचित्र सपने का भी क्या कोई रहस्य है प्रभु !" राजा ने एक और सपने के बारे में जिज्ञासा की।

"यह स्वप्न भी बड़ा अर्थ पूर्ण है राजन ! इस सपने का मर्म यह है कि आने वाले युग में न्यायाधीश निष्पक्ष न्याय नहीं करेंगे और दोनों पक्षों से रिश्वत लेंगे। फिर भी वे किसी के प्रति भी ईमानदारी के साथ न्याय नहीं करेंगे।" बुद्ध ने कहा ।

"एक आदमी एक रस्सा बाँट रहा था। रस्सा बाँटने के बाद बँटे हुए हिस्से को नीचे गिराता जा रहा था। उस आदमी की आँख बचा कर एक मादा सियार नीचे पड़े बँटे रस्से को चबाती जा रही थी।" राजा ने यह कह कर इसका रहस्य पूछा ।

"आनेवाले युग में पाप बढ़ जाने से अधिक लोग दरिद्र हो जायेंगे। पति कड़ी मेहनत करके जो धन जोड़ेंगे, उनकी पत्नियाँ उन्हें उसी वक्त ख़र्च करती जायेंगी।" महात्मा बुद्ध ने सपने का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा ।

राजा ने सन्तुष्ट होकर एक अन्य सपने के बारे में बताते हुए कहा— "मैंने राजमहल के पास जल से भरा हुआ एक घड़ा देखा। उसके चारों तरफ़ कई खाली घड़े थे। वहाँ पर सभी जाति और वर्ण के लोग पानी भर कर ला रहे थे और भरे हुए घड़े में ही डाल रहे थे, जब कि भरा हुआ घड़ा छलक रहा था। खाली घड़े में कोई पानी नहीं डाल रहा था। आख़िर ऐसा क्यों ?"

भगवान बुद्ध ने इस स्वप्न का अर्थ बताते हुए कहा— "भविष्य में अन्याय और अधर्म

बढ़ जायेगा। प्रजा कठिन परिश्रम से धन कमा कर राजा के भय से खज़ाने में डाल देगी जहाँ पहले ही धन भरा होगा। लेकिन प्रजा के घर खाली घड़ों की भाँति एक दम खाली रहेंगे।"

"एक अन्य स्वप्न में मैंने एक पात्र में कुछ अनाज पकते देखा। लेकिन अन्न समान रूप में नहीं पक रहा था। पात्र के एक हिस्से में अन्न पक कर गल गया था, जब कि दूसरे हिस्से का अन्न ठीक पका हुआ था। और एक और हिस्से में अन्न कच्चा ही था।" राजा ने एक और स्वप्न सुनाया ।

बुद्ध ने इसका मर्म बताते हुए कहा— "भविष्य में खेती-बाड़ी कुछ ऐसी ही होगी। कुछ लोग भविष्य में अति वृष्टि और बाढ़ से

पीड़ित रहेंगे और कुछ हिस्से में सूखा पड़ेगा। बहुत कम हिस्से में आवश्यकता के अनुसार वर्षा होगी।"

एक और स्वप्न बताते हुए राजा ने उसका मर्म पूछा— "कुछ लोगों को गली-गली घूम कर चन्दन बेच कर धन लेते हुए मैं ने देखा।"

"इसका अर्थ यह है कि आने वाले युग में नीच व्यक्ति पवित्र धर्मोपदेश देकर तुच्छ भौतिक सुख प्राप्त करेंगे।" बुद्ध ने सपने का रहस्य बताते हुए कहा।

"मैंने एक सपना और देखा है।" राजा ने कहा। "मैंने देखा कि पानी पर पत्थर तैर रहे हैं और राजहंसों का एक झुण्ड कौओं के पीछे रेंगता जा रहा है। एक अन्य स्थान पर कुछ बकरियों को बाघ का पीछा करके उसे मारकर खाते देखा।"

बुद्ध ने उस सपने का अर्थ बताते हुए कहा—"राजन ! आप चिन्ता न कीजिए। ये सपने आप के युग से सम्बन्धित बिल्कुल नहीं हैं। उनका सम्बन्ध भविष्य से है। भविष्य में धर्म का नाश हो जायेगा और अधर्म बहुत बढ़ जायेगा। इसलिए बेड़-बड़े ज्ञानी और महात्मा भी समाज में अनादरित और अपमानित होकर समय के प्रवाह में पत्थरों की तरह बह जायेंगे। नीच लोगों के हाथ में शासन होने के कारण राजहंस जैसे सन्त और महात्मा कौओं के समान दुष्ट और नीच लोगों के चरण-चिन्हों पर चलेंगे दुष्ट व्यक्तियों के हाथों में अधिकार आ जाने से सात्विक गुण वाले निर्दोष व्यक्ति भी उनमें भयभीत रहेंगे। इतना ही नहीं वे नीच व्यक्ति अवसर पाकर उत्तम व्यक्तियों का अन्त भी कर डालेंगे।"

भगवान बुद्ध के प्रवचनों से राजा बिंबिसार के सारे सन्देह दूर हो गये। साथ ही उनका भय और चिन्ता भी दूर हो गई। वे समझ गये कि ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थ के कारण उन्हें ऐसा परामर्श दिया था। इसलिए उन्होंने यज्ञ कराने का विचार छोड़ दिया तथा महात्मा बुद्ध को भिक्षा देकर उन्हें आदर-सत्कार के साथ विदा किया।

टीपू सुलतान

मैसूर के शासक हैदर अली ने भारत में अपनी जड़ें जमाने वाले ब्रिटिश शासकों के सामने अपना सिर झुकाने से इनकार कर दिया। परिणाम स्वरूप ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ उसकी शत्रुता बढ़ती गई और युद्ध के रूप में परिणत हो गई।

नासूर की व्याधि से सन् १७८२ में हैदर अली की मृत्यु हो गई। अन्तिम दम तक अंगरेजों से युद्ध करते रहे। हैदर अली की मृत्यु के बाद उसके वीर और बुद्धिमान पुत्र टीपू सुलतान ने सेना का नेतृत्व किया और कम्पनी के साथ युद्ध जारी रखा। टीपू सुलतान के साहस और पराक्रम को देख शत्रु भयकम्पित हो गये।

परिणाम स्वरूप युद्ध में ब्रिटिश सेना हार गई। कम्पनी का सेनापति ब्रिगेडियर मैथ्यूस टीपू सुलतान द्वारा बन्दी बना लिया गया। सन् १७८४ में कम्पनी टीपू सुलतान के साथ सन्धि के लिए राजी हो गई।
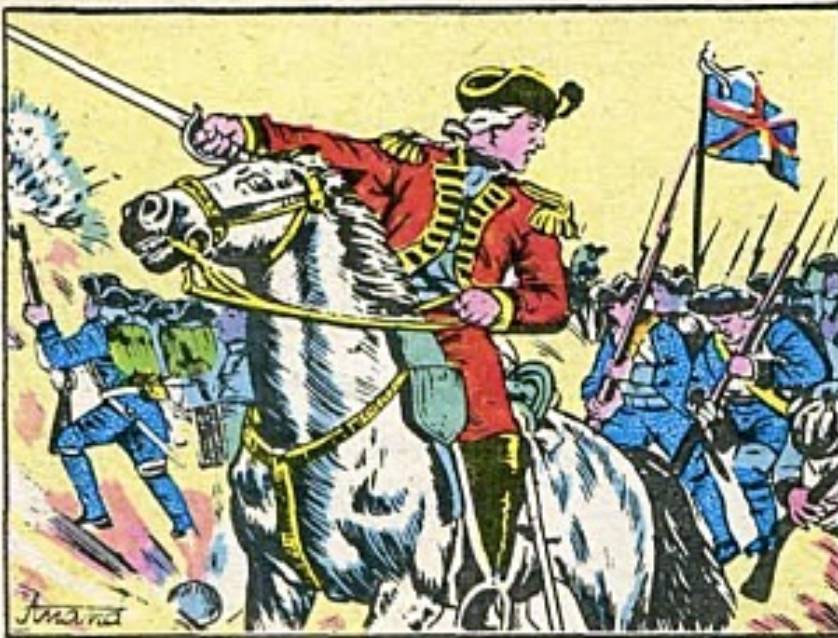
टीपू सुलतान तथा कम्पनी के बीच बहुत थोड़े दिनों तक शान्ति रही। गवर्नर जनरल कार्नवालिस टीपू को अपने वश में करने के मौक़े की ताक में था। उसने तीन बार मैसूर पर आक्रमण करने के लिए अपनी सेना भेजी। अन्तिम दो बार के आक्रमणों में सेना का संचालन उसने स्वयं किया।

ब्रिटिश सेना ने श्रीरंग पट्टणम पर अधिकार कर लिया। सन् १७९२ में टीपू सुलतान ने एक समझौते के अनुसार अपने राज्य का अधिकांश भाग कम्पनी के अधीन कर दिया। फिर भी ब्रिटिश सरकार ने ज़ोर डाला कि टीपू अपने दो पुत्रों को कम्पनी के पास गिरवी रख दे।
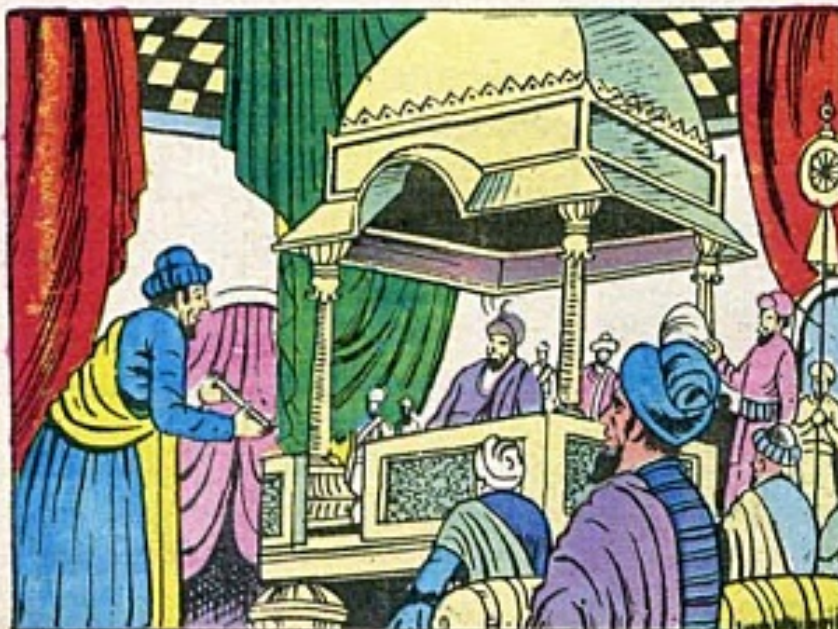
टीपू इस अपमान जनक शर्त को सहन न कर सके। उन्होंने हैदराबाद निजाम के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए उसके पास यह सन्देश भेजा कि वह निजाम की एक पुत्री को अपनी पुत्र-बधू बनाने को तैयार है।

परन्तु इसके पहले ही निजाम ने ब्रिटिश कम्पनी के साथ समझौता कर लिया था। इसके बाद टीपू सुलतान ने ब्रिटिश सेना के विरुद्ध, अरब, टर्की, फ्रान्स तथा अफगानिस्तान देशों के पास दूत भेज कर सहायता मांगी। किन्तु किसी देश ने भी मदद नहीं की।
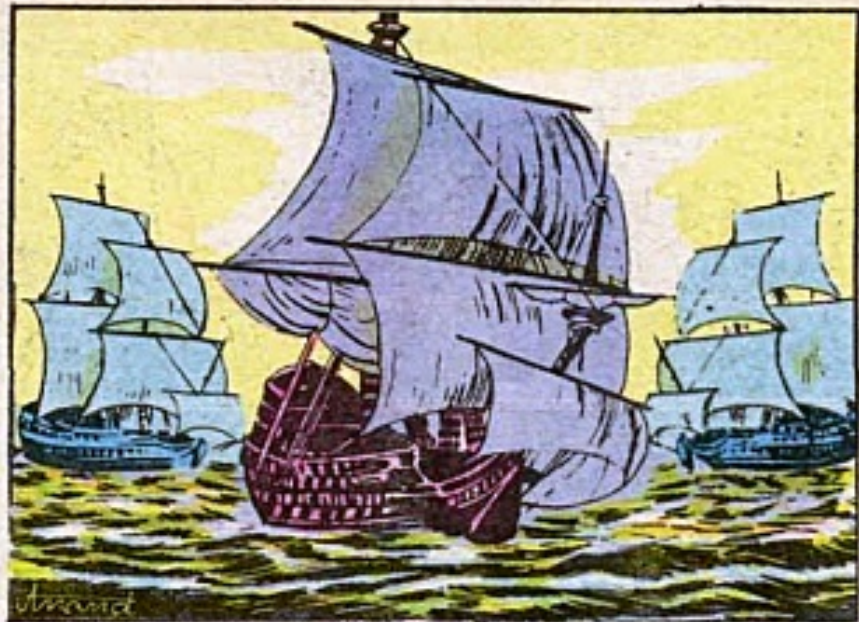
टीपू को खबर मिली कि फ्रान्स की सेना मॉरिशस में है। इस खबर के अनुसार उसने वहाँ के फ्रांसिसी गवर्नर मलार्टिक के पास गुप्त सन्देश भेज कर उससे मदद माँगी। पर वहाँ फ्रान्स की सेना नहीं थी। फिर भी फ्रांसिसी गवर्नर टीपू सुलतान के प्रति आदर-भाव रखता था। इसलिए उन्होंने यह घोषणा करवा दी कि ब्रिटिश सेना का सामना करने के लिए कोई भी सैनिक स्वेच्छा से भारत जाकर टीपू की सेना में भर्ती हो सकता है।

यह खबर भारत के नये ब्रिटिश गवर्नर जनरल को मिली। उन्होंने यह समझा कि टीपू युद्ध की तैयारी कर रहा है। इसलिए सन् १७९८ में उन्होंने युद्ध की घोषणा कर दी। ब्रिटिश कम्पनी के साथ निजाम और महाराष्ट्रियों ने भी हाथ बँटाया। इसी कारण टीपू के शत्रु अधिक शक्तिशाली बन गये।
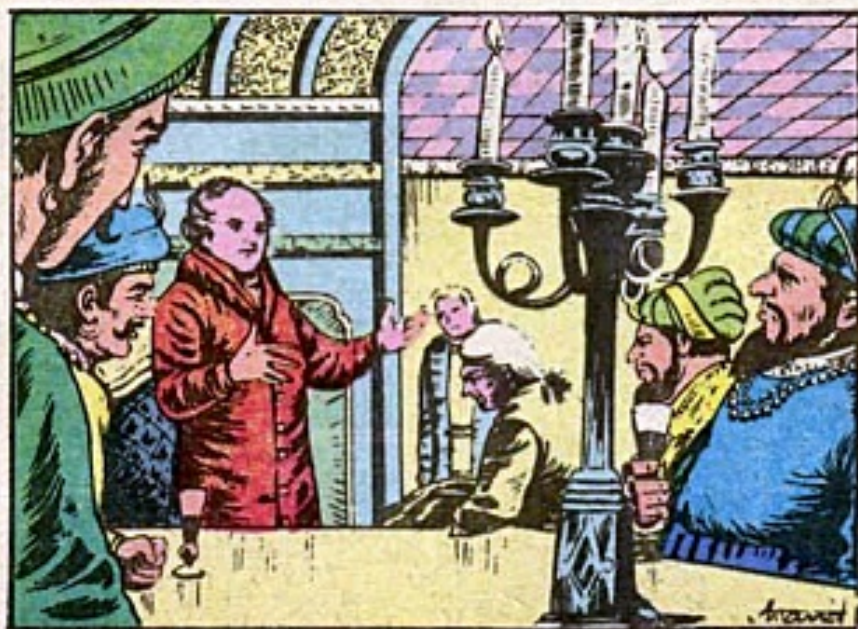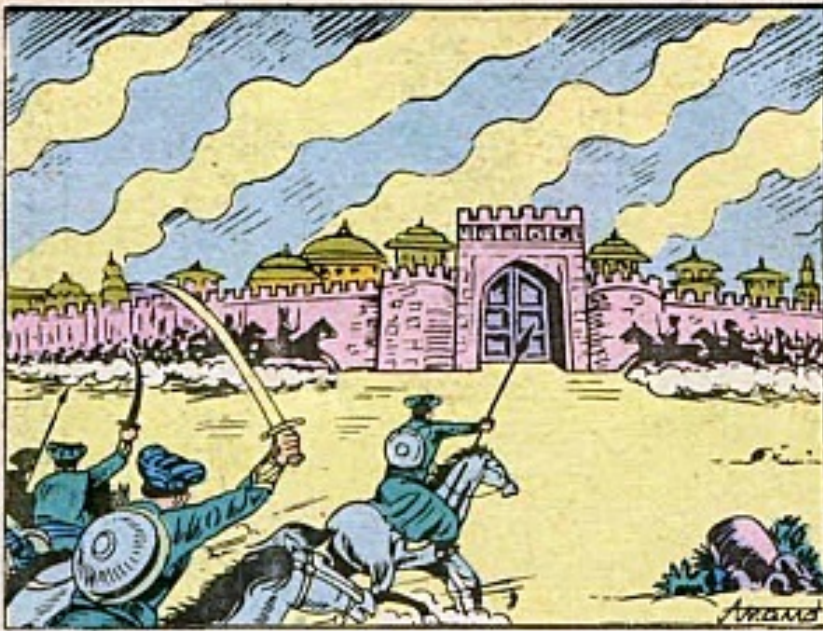
शत्रुओं ने एक साथ तीन दिशाओं से श्रीरंग पट्टणम को घेर लिया। अकेली कम्पनी की सेना ही पैंतीस हज़ार से अधिक थी। साथ ही, अन्य राजाओं की सहायता मिल जाने से टीपू की विजय सन्दिग्ध हो गई।

कम्पनी ने टीपू के पास यह खबर भेजी कि यदि वह ब्रिटिश शासन की अधीनता क़बूल कर ले तो उसे वैभवपूर्ण जीवन यापन के लिए पर्याप्त वार्षिक मुआवजा दिया जायेगा। पर टीपू ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया और अन्तिम सांस तक उनसे युद्ध करता रहा।

अपने देश के कई शासकों को ब्रिटिश शासन के साथ मिलते देख कर भी टीपू ने हिम्मत नहीं हारी और साहस के साथ उनका डट कर मुक़ाबला किया। उन्होंने अपनी हिन्दू प्रजा के साथ आदरपूर्ण व्यवहार किया। जिस प्रकार महाराणा प्रताप ने आजीवन मुगलों का विरोध किया, वैसे ही टीपू सुलतान भी मृत्यु पर्यन्त अंगरेजों का विरोध करते रहे और इस प्रकार इतिहास में अमर बन गये।

क्रोध की दवा

शादी के बाद जब अरुणा ससुराल आई तब सभी लोगों ने उसे समझाया कि उसका पति सदानन्द सब तरह से योग्य और बुद्धिमान है, लेकिन थोड़ा क्रोधी स्वभाव का है। इसलिए अरुणा हर समय सावधान रहती थी कि कहीं उससे कोई गलती न हो जाये और सदानन्द क्रोध कर बैठे।

एक सप्ताह मज़े से कट गया। एक दिन अरुणा से सदानन्द ने स्वयं ही कहा— "सब लोग पता नहीं मुझे गुस्सैल क्यों समझते हैं! मैं यों ही बिना कारण क्रोध तो करता नहीं।"

इस बात से अरुणा को थोड़ी चैन मिली।

एक हफ़्ते के बाद सदानन्द ने अरुणा से फिर कहा— "देखो! हमारा मकान काफी बड़ा है। पिछवाड़े में फल के पेड़ और सब्जी के पौधे भी हैं। इसकी देखभाल और सफ़ाई रखने में तुम्हें काफी परेशानी होगी। इसलिए तुम्हारी मदद के लिए एक नौकरानी रख दूँगा।"

"अजी, नौकरानी की क्या जरूरत है! मैं तो घर में अकेली हूँ। मैं घर के सभी काम खुद ही कर लूँगी।" अरुणा ने जवाब दिया।

बस इसी बात पर सदानन्द क्रोधित हो उठा। वह गरजता हुआ बोला— "अगर तुम्हारा यही ख्याल है कि घर के सारे काम-काज एक ही आदमी कर सकता है तो मैं ही सारे काम कर देता हूँ।" यह कह कर गुस्से में झाड़ू लगाने से लेकर बर्तन और कपड़े की सफ़ाई तक उसीने की और दफ़्तर चला गया।

"अब हमारा मकान कैसा है?" कुछ दिनों के बाद सदानन्द ने अरुणा से पूछा। अरुणा डर से कुछ नहीं बोली। लेकिन सदानन्द को इस बात पर भी गुस्सा आ गया। वह नाराज़ होकर बोला— "भला अच्छा क्यों नहीं होगा? इस मकान के लिए बड़ी रक़म किराये में जो चुकाता हूँ। इतनी रक़म देने के लिए वेतन भी तो अधिक होना चाहिए।" इतना कह कर वह घर

वनिता पाठक

के पिछवाड़े में चला गया और पौधों के लिए क्यारियाँ बना कर उनमें पानी दिया। अरुणा हाथ बटाँने गई तो उसे डाँट कर भगा दिया।

पति का यह क्रोध अरुणा को विचित्र लगा। जब भी वह क्रोध में आता वह अपने आपको काफी कष्ट पहुँचाता। पर कभी किसी का कोई नुक़सान नहीं पहुँचाता।

सदानन्द के व्यवहार से अरुणा दुखी रहने लगी। एक दिन उसने पड़ोसिन को अपना दुखड़ा सुनाया। सारी बातें सुनकर पड़ोसिन बोली— "काश ! मेरे पति में भी ऐसा ही क्रोध होता तो क्या ही अच्छा होता। तुम सचमुच कितनी भाग्यशालिनी हो अरुणा।"

कुछ दिन और बीत गये। एक दिन सदानन्द अपने साथ एक साधु को लेकर घर पहुँचे। लोगों का विश्वास था कि उस साधु के पास अनेक सिद्धियाँ हैं। सदानन्द ने साधु से निवेदन किया— "साधु महाराज, मेरी पत्नी सब प्रकार से बड़ी अच्छी और भली है। लेकिन वह हर बात को लेकर क्रोध के लिए मुझे उकसाती रहती है। इसलिए आप उसके इस स्वभाव को बदलने की कृपा करें।"

साधु ने अरुणा को बुला कर पूछा— "बेटी, तुम अपने पति को बहुत चाहती हो न ?"

अरुणा ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया।

"क्या तुम अपने पति के स्वभाव में कोई परिवर्तन चाहती हो ?" साधु ने फिर पूछा।

अरुणा ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया।

"तो बताओ, कैसा परिवर्तन चाहती हो ?" साधु ने जानना चाहा। अरुणा ने डरते सहमते हुए सदानन्द की ओर देखा।

"तुम डरो मत ! अपने मन की बात बताओ।" साधु ने कहा।

"वे बड़े गुस्सैल हैं। हर बात को लेकर खीजते और झिड़कते रहते हैं। आप कृपया उनका यह स्वभाव बदल दीजिए।" अरुणा ने कहा।

"तुम्हारे पति का क्रोध एक शर्त्त पर कम हो सकता है, इसके लिए तुम्हें एक ही जून भोजन करना होगा।" साधु ने समझाया।

अरुणा ने तुरंत साधु की बात मान ली। साधु ने उसको वहाँ से भेज दिया। फिर

सदानन्द से बोले— " तुम्हारी पत्नी तुमको दिल से चाहती है। उसकी अवस्था के लोगों को ज़्यादा भूख लगती है। फिर भी वह एक जून खाने के लिए तैयार है, इस का मतलब यही है कि वह तुम्हारे क्रोध से परेशान है।"

"स्वामि ! यह सब केवल दिखावा है।" यह जवाब देकर सदानन्द ने साधु को अपनी कहानी बताई कि वह क्रोध आने पर क्या-क्या करता है। साधु ने सारी बातें शांति से सुन लीं। फिर मन्दहास करके कहा— "तुम्हारे क्रोध से तुम्हें ही अधिक हानि होती है और तुम्हारी पत्नी को लाभ पहुँचता है। फिर भी यदि तुम्हारी पत्नी तुम्हारे क्रोध को दूर कराने की इच्छा रखती है तो समझ लो कि वह कैसी उत्तम स्वभाव की है। ऐसी पत्नी का प्राप्त होना तुम्हारे लिए भाग्य की ही बात कही जा सकती है।"

सदानन्द को लगा कि साधु की बातों में सच्चाई है। पर पत्नी की वजह से उसे साधु द्वारा उपदेश लेना पड़ा। इस बात पर सदानन्द को अपनी पत्नी पर बहुत गुस्सा आया।

साधु के घर से निकलते ही सदानन्द अरुणा पर बिगड़ पड़ा। क्रोध आते ही उसी वक्त कुएँ से पानी खींच कर सारा मकान धो-धाकर साफ़ करने लगा। अरुणा की समझ में न आया कि क्या करे। वह घर से निकल पड़ी और शाम को वापस आई। सदानन्द ने नाराज़ हो कर पूछा— "तुम कहाँ गई थी ?"

"पड़ोसी घर में काम करने के लिए गई थी।" अरुणा ने कहा।

"क्या तुम्हारी ऐसी दुर्दशा हो गई है कि पड़ोसी के घर काम करना पड़े।" सदानन्द ने पुनः कड़क कर पूछा।

"दुर्दशा नहीं, गुस्सा आ गया था। आप अनावश्यक मुझ पर नाराज़ होते रहते हैं। इसलिए मुझे भी गुस्सा आ गया। मेरे मन में भी काम करने की इच्छा है पर आप अपने घर काम करने नहीं देते। इसलिए मैं पड़ोसी घर में जाकर काम करने लगी।" अरुणा ने उत्तर दिया।

"पड़ोसी घर में काम करने से क्या मेरी इज्जत धूल में नहीं मिल जाएगी ?" सदानन्द ने पूछा।

"आप की इज्जत में कोई बट्टा नहीं लगता।

मैं ने उस परिवार वालों को समझाया कि मेरे पति अस्वस्थ हैं। एक साधु ने मुझे सुझाव दिया है कि यदि मैं पड़ोसी के घर में काम करूँ तो उन्हें स्वास्थ्य लाभ हो जायेगा।" अरुणा ने कहा।

"चाहे कुछ भी हो, तुम पराये घर में जाकर हरगिज़ काम नहीं कर सकती।" सदानन्द ने जोर दे कर कहा।

"जब तक आप अपने घर में इस प्रकार सारे काम खुद करते रहेंगे, तब तक मैं भी पराये घरों में जाकर काम करूँगी।" अरुणा ने स्पष्ट कह दिया।

"मैं अपने ही घर में काम करता हूँ तो इससे तुम्हारे लिए हर्ज़ क्या है ?" सदानन्द ने पूछा।

"मैं पराये घर में जाकर काम करती हूँ तो आप की क्या हानि है ? इससे बस यही होता है कि आप के क्रोध से मेरी मदद हो जाती है और मेरे क्रोध से पड़ोसियों की सहायता मिल जाती है। अरुणा ने समझाया।

पत्नी के साथ इस प्रकार वाद-विवाद करने के बाद असली बात सदानन्द की समझ में आ गई। वह यह कि पत्नी से वह बहुत प्यार करता है, इसलिए वह अपनी पत्नी को ज़्यादा मेहनत करते हुए देख नहीं पाता। इसी प्रकार पत्नी उसे दिलो जान से प्यार करती है, इसलिए वह उसके काम करते सहन नहीं कर पाती है। यही बात सदानन्द को साधू ने भी बताई।

"अरुणा, मुझे माफ़ कर दो। मैं आइन्दा कभी तुम पर नाराज़ नहीं होऊँगा।" सदानन्द ने कहा। इसके बाद सदानन्द ने अरुणा को अनेक प्रकार से समझाया कि वह उपवास करना छोड़ दे, पर अरुणा ने जिद करके बताया—"साधू महाराज ने जो उपाय बताया, वह सफल हुआ। उनके कहे अनुसार मैं एक महीने तक एक जून खाना खाकर दूसरे जून उपवास करूँगी।" यों कह कर अरुणा ने एक महीने तक उपवास किया। उसके साथ सदानन्द ने भी उतने ही दिनों का उपवास किया। इसके बाद उस दम्पत्ति ने एक दूसरे पर क्रोध करना छोड़ दिया और वे एक दूसरे की मदद करते हुए सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगे।
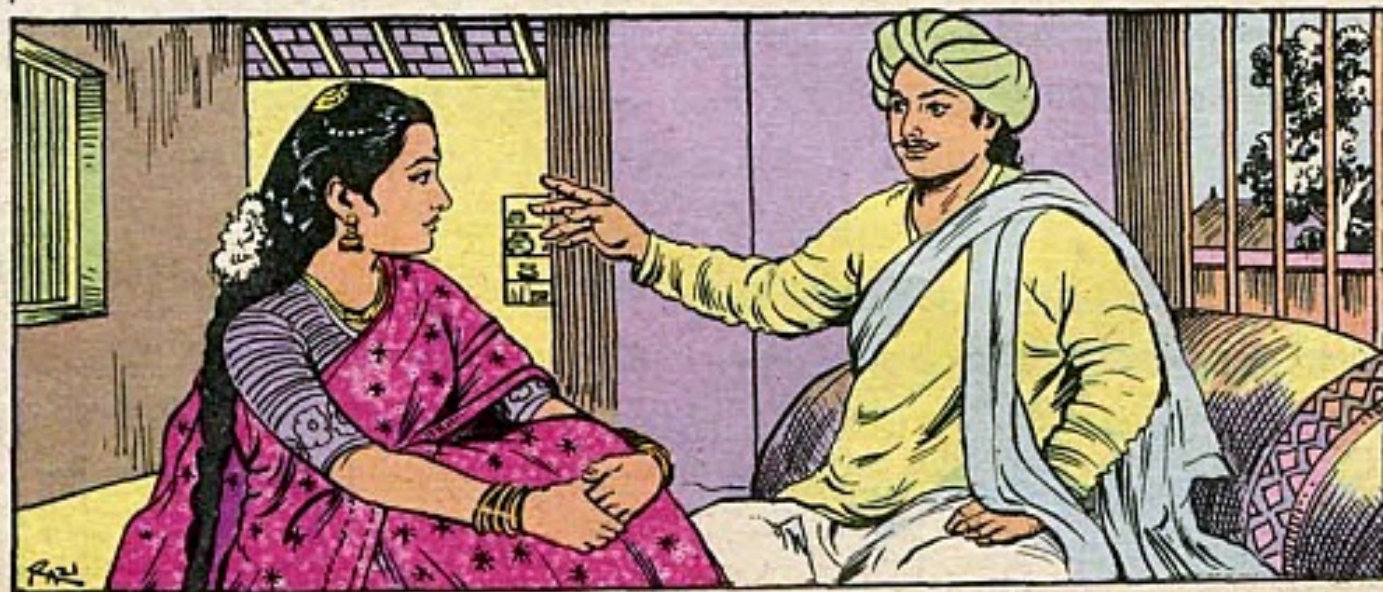
नाटकों का मोह

गोविन्द बचपन में पढ़ाई को तिलांजलि देकर नाटकों के मोह में पड़कर इधर-उधर चक्कर लगाता रहा। आख़िर वह एक मास के बाद अपने गांव को छोड़कर शहर चला आया। वहां एक नाटक मण्डली में शामिल होकर बड़ी मुश्किल से आख़िर एक पात्र की भूमिका प्राप्त कर सका। नाटक कंपनी वाले एक सप्ताह में नाटक का प्रदर्शन करने जा रहे थे।

उस नाटक के अपने पार्ट में गोविन्द अपनी माँ से झगड़ करके घर छोड़ कर चला आता है। उसका मामा उस की खोज करता हुआ आ पहुँचता है और उसे समझाता है— "देखो बेटा, तुम्हारी माँ तुम्हारी याद में खाट पकड़ चुकी है और दिन-रात तुम्हारी रट लगाती रहती है। इसलिए घर लौट चलो।" पर गोविन्द अपनी माँ के पास लौटने से इनकार कर देता है। आखिर उस बीमारी की हालत में भी उसकी माँ गोविन्द से मिलने के लिए वहाँ पर आ जाती है। अपनी माँ की ममता से पसीज कर गोविन्द घर लौट जाता है।

नाटक में गोविन्द के मामा के पात्र का अभिनय नाटक मण्डली का मालिक स्वयं राजाराम करने वाला था। पर गोविन्द अपने पार्ट को अभी तक ठीक से कंठस्थ नहीं कर पाया था। इस कारण रोज संध्या के समय राजाराम उसे वार्तालाप सिखा रहा था।

एक दिन शाम को राजाराम देर से पहुँचा और बोला— "गोविन्द, मुझे तो और कई जरूरी काम आ गए हैं। कल से मैं यहाँ पर आ नहीं सकता। तुम इस बीच सारे वार्तालाप खुद कंठस्थ कर लो।"

"अच्छी बात है।" यों जवाब देकर गोविन्द उस मकान के पिछवाड़े में चला गया।

उस मकान के पिछवाड़े से लग कर जमीन्दार के महल की ऊंची चहार दीवारी थी।

कृष्णदत्त तिवारी

वह चहार दीवारी उजड़ गई थी और उस में बड़े-बड़े छेद बने हुए थे ।

राजाराम नाटक के वार्तालाप सुनाते हुए बोला— "तुम्हारे घर छोड़ने के बाद तुम्हारी माँ की तबीयत बिलकुल बिगड़ गई है, चलो, हम तुम्हारे घर चलें ।"

"मामाजी, मैं कभी उस घर में क़दम नहीं रखूँगा । आइन्दा मैं अपनी माँ का चेहरा तक देखना नहीं चाहता ।" यों कहकर गोविन्द ने क्रोध का अभिनय किया ।

"यह तुम क्या कहते हो बेटा । तुम भले ही अपनी माँ को देखना न चाहते हो, पर अपने पुत्र को देखने के लिए माँ का दिल कैसे छटपटाता है, तुम क्या जानो । यदि तुम नहीं चलोगे तो तुम्हारी माँ का बचना मुश्किल है ।" राजाराम ने अपना वार्तालाप दुहराया ।

इस प्रकार थोड़ी देर तक राजाराम गोविन्द के साथ मिलकर नाटक के वार्तालाप दुहराता रहा, फिर वहाँ से चला गया । इसके बाद गोविन्द पिछवाड़े के कुएँ के पास हाथ-मुँह धोकर पिछवाड़े के द्वार की ओर चल पड़ा ।

उसी वक्त उसे उजड़ी हुई दीवार के छेद में से तालियों के बजने की आवाज़ सुनाई दी । गोविन्द चौंक पड़ा और सहमते हुए उसने मुड़कर दीवार की ओर नज़र दौड़ाई ।

इस बार उसे ये शब्द सुनाई दिए— "तुम इस अंधेरे में शायद कोई पिशाच समझ रहे होगे । मैं कोई भूत या पिशाच नहीं हूँ । मेरे पास आ जाओ ।"

ये शब्द सुनकर गोविन्द अपनी हिम्मत बटोरकर दीवार के छेद के समीप पहुँचा । उसे छेद के उस पार सफ़ेद दाढ़ी वाला एक वृद्ध दिखाई दिया ।

वृद्ध ने कठोर स्वर में कहा— "सुनो तुम्हारी माँ मृत्यु शय्या पर पड़ी हुई है और तुम्हारे मामा घर चलने के लिए तुम से गिड़गिड़ा रहे हैं । लेकिन तुम घर वापस न लौटने की ज़िद क्यों करते हो ?"

गोविन्द ने भाँप लिया कि वह वृद्ध नाटक के वार्तालाप को सच मान रहे हैं ।

उसने खीझकर कहा— "चाहे कोई भी गिड़गिड़ावे या बिनती करे मैं अपने घर नहीं

लौटूँगा। फिर भी यह तो बताओ कि मैं अपने घर लौट कर नहीं जाता हूँ तो इससे आप का बनता-बिगड़ता क्या है ?"

वृद्ध दो-तीन पल तक मौन रहा, फिर बोला— "बेटा, तुम नाराज़ क्यों होते हो। यह महल मेरा ही है। मैं भी तुम्हारे जैसे बचपन में घर छोड़ कर भाग आया हूँ। मेरी माँ मेरा नाम रटते हुए चल बसी। उसके बाद मैं घर पहुँचा, लेकिन क्या फ़ायदा।"

अब गोविन्द समझ गया कि उसके साथ बात करने वाला व्यक्ति वृद्ध जमीन्दार है। दूसरे क्षण उसके दिमाग में कोई बात बिजली की भाँति कौंध गई। गोविन्द ने चिंता प्रकट करते हुए कहा— "मैं एक गरीब परिवार का व्यक्ति हूँ। हमारे खाने-पीने का कोई ठिकाना नहीं है। इसीलिए मैं धन कमाने के विचार से इस शहर में आया हूँ। मेरा गाँव यहाँ से बहुत दूर है। घर लौटने के लिए रुपयों की जरूरत है। मैं कहाँ से ला सकता हूँ ?"

यह उत्तर सुनकर जमीन्दार खिलखिलाकर हंस पड़ा और बोला— "तुम को घर लिवा ले जाने के लिए आया हुआ मामा अपने साथ काफी रुपए लाया होगा। फिर भी मैं तुम्हें उचित धन दे देता हूँ, थोड़ा रुक जाओ। मैं अकेला आदमी हूँ। मेरे पास काफी धन है।" यों कहकर जमीन्दार वहाँ से चला गया।

आधा घंटा बीत गया। गोविन्द उस अंधेरे में उजड़ी दीवार के पास खड़ा हुआ था। उसके मन में फिर यह शंका पैदा हुई कि उसके साथ बात करने वाला व्यक्ति बूढ़ा जमीन्दार है या कोई पिशाच है। इस डर से वह चारों ओर सहमी नज़र से ताक रहा था, इसी बीच जमीन्दार दीवार के छेद के पास लौट आया।

जमीन्दार ने दीवार के छेद में से एक छोटी पोटली गोविन्द की ओर बढ़ाकर कहा— "तुम यह पोटली ले लो और कल सवेरे नीन्द से जागते ही अपने गाँव चले जाओ।"

गोविन्द घर के अन्दर आया और दीपक की रोशनी में पोटली खोल कर देखी। उसमें आँखों को चौंधियाने वाले सोने के दस सिक्के थे। गोविन्द ने उन सिक्कों को पोटली में बन्द किया

सही, देरी न करो, तुरन्त घर चले जाओ।''

''मामाजी, मैं ने एक बार साफ़ कह दिया कि मैं घर नहीं लौटूँगा। बस मैं अपने वचन को बदल नहीं सकता। तुम यहाँ से चले जाओ।'' गोविन्द दृढ़ स्वर में बोला।

''मैं तुम्हारी माँ से कह दूँगा कि इस वक्त तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। चार-पाँच दिनों के अन्दर तुमको लिवा लाऊँगा। तुम कल तक अपना यह विचार बदल कर मेरे साथ घर चलो।'' यह कहकर राजाराम चला गया।

गोविन्द ने सोचा कि यह वार्तालाप जमीन्दार साहब ने सुन लिया होगा। इसी आशा से उसने दीवार के छेद की ओर दृष्टि दौड़ाई। वहाँ पर जमीन्दार खड़ा हुआ था। उसने गरजकर कहा— ''मैंने तुम्हे धन दे दिया है। तुमने घर लौटने की बात बताई, लेकिन क्यों नहीं गए? अपने मामा से तुम क्यों झगड़ा करते हो?''

गोविन्द विनयपूर्वक बोला— ''कल मैं आप से कहना भूल गया। यहाँ पर मैंने कई लोगों से कर्ज लिया है। उसे चुकाए बगैर घर लौटना उचित न होगा।''

''हाँ-हाँ तुम्हारा कहना उचित ही है। तुम्हें कल ही मुझसे कर्ज की बात कहनी थी। थोड़ा रुक जाओ।'' यों जवाब देकर बूढ़ा जमीन्दार वहाँ से चला गया और थोड़ी देर बाद एक पोटली लेकर लौट आया।

गोविन्द ने बड़ी उत्कंठा के साथ दीवार के छेद की ओर हाथ बढ़ाया। जमीन्दार उसके

और अपने बकसे में कपड़ों के नीचे उसी पोटली में छिपा कर रख दिया।

दूसरे दिन उसने अड़ोस-पड़ोस से पता लगाया तो उसे मालूम हुआ कि बूढ़ा जमीन्दार बड़े ही उदार स्वभाव के हैं। मुसीबतों में फंसे हुए लोगों में अपना धन बाँटते रहते हैं।

यह समाचार मिलते ही गोविन्द के मन में यह लोभ पैदा हुआ कि जमीन्दार से थोड़ा धन और ऐंठना चाहिए। उस दिन शाम को अंधेरा फैलते ही राजाराम आ गया। दोनों उस मकान के पिछवाड़े में जा पहुँचे।

राजाराम नाटक के आगे का वार्तालाप सुनाता हुआ बोला— ''तुम्हारी माँ तुम्हारी राह देखते हुए अंतिम घड़ियाँ गिन रही है। अब भी

हाथ में पोटली रख कर बोला— "अब तुम देर न करो। कल सवेरे नीन्द से जागते ही अपने गाँव चले जाओ। तुमने जो गलती की, इस के लिए तुम अपनी माँ से माफ़ी माँग लेना।"

गोविन्द ने मकान के अन्दर पहुँचकर दीपक की रोशनी में पोटली खोलकर देखी। इस बार उसमें सोने के बीस सिक्के थे। उसने उन सिक्कों को भी अपनी पेटी में कपड़ों के नीचे छिपा कर रख दिया।

इस प्रकार वृद्ध जमीन्दार से तीस सोने के सिक्के ऐंठने के बाद उसके मन में और सिक्के ऐंठने का लालच पैदा हुआ और इसके लिए दिन भर कोई उपाय सोचता रहा।

उस दिन शाम को राजाराम वहाँ पहुँचकर बोला— "गोविन्द नाटक के अन्त में हमने थोड़ा परिवर्तन कर दिया है। माँ का पात्र मर जाने की वजह से पुत्र के मन में हमने पश्चात्ताप पैदा करना चाहा। इस कारण से वार्तालाप में हमने जो परिवर्तन किये वे तुम्हें सुना देता हूँ, पिछवाड़े में चलो। यह कहकर राजाराम गोविन्द को पिछवाड़े में ले गया और बोला— "उफ! सब कुछ समाप्त हो गया है। माँ और पुत्र का ऋण चुक गया। मैंने जब तुम्हारी माँ से कहा कि तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है, तब तुम्हारी माँ उस भयंकर बीमारी की हालत में भी किराए की गाड़ी ठीक करके तुम्हें देखने घर से चल पड़ी। लेकिन क्या फ़ायदा। गाड़ी गाँव के बाहर पहुँची भी नहीं, कि इसी बीच उसने तुम्हारी याद करते हुए सदा के लिए अपनी आँखें मूँद लीं।"

गोविन्द अनिच्छा पूर्वक सर हिलाकर कुछ कहने को हुआ, इतने में वृद्ध जमीन्दार दीवार के छेद के उस पार से ही गरज कर बोला— "अरे दुष्ट, पहले से ही मेरे मन में यह शंका थी कि ऐसा होकर रहेगा। रुक जाओ, मैं अभी आता हूँ।"

ये बातें सुनकर राजाराम घबरा कर बोला— "इस अंधेरे में यह कौन चिल्ला रहा है? कोई पिशाच तो नहीं है!"

गोविन्द के मुँह से बोल नहीं फूटे। वह आपाद मस्तक काँप उठा और मकान के अन्दर चला आया। वहाँ पर उसे वृद्ध जमीन्दार और एक लाठी हाथ में लिये हुए उसका नौकर दिखाई दिए।

जमीन्दार ने गोविन्द की ओर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाकर कहा— "मैंने तुम्हें घर लौटने की बात समझाकर सोने के तीस सिक्के दिए, फिर भी तुम अपने घर नहीं लौटे, बल्कि अपनी माँ की मृत्यु का कारण बन गए। तुम जैसे दुष्ट की छाया तक देखना पाप है।" यों कहकर जमीन्दार ने अपने नौकर की तरफ़ मुड़कर देखा।

जमीन्दार के नौकर ने सारे मकान की तलाशी ली और गोविन्द की पेटी में कपड़ों के नीचे से सोने के सिक्कों वाली दोनों पोटलियाँ बाहर निकालीं। फिर अपने मालिक के पीछे मकान के बाहर चला गया।

राजाराम को असली बात मालूम हो गई। उसने दाँत भींचते हुए गोविन्द की ओर देखकर कहा— "इसका मतलब है कि नाटक के वार्तालापों को सच्चा समझ कर जमीन्दार ने तुम को इतना सारा धन दे डाला था। पर तुमने भूल से ही सही, यह बात मुझे नहीं बताई। तुम्हारे स्वार्थ ने ही तुम को सच्चा सबक़ सिखाया। तुम जैसे लालच वाले आदमी को हमारे नाटक में कोई स्थान नहीं है। तुम अभी यहाँ से चले जाओ।" इस प्रकार डांटकर राजाराम वहाँ से चला आया।

अब गोविन्द के मन में गहरा पश्चात्ताप होने लगा। उसने अपनी माँ के साथ ही नहीं, बल्कि धर्मात्मा और दयालु स्वभाव वाले वृद्ध जमीन्दार के साथ भी धोखा किया। अपने ही गाँव में व्यापार करने की इच्छा प्रकट करते ही उसकी माँ ने अपने हाथ की सोने की एक चूड़ी निकाल कर उसे दे दी थी। उसके बाद भी वह शहर आकर नाटकों के मोह में वह अपना समय बरबाद कर रहा था।

अब भी वह घर लौट जाएगा तो उसकी माँ बहुत प्रसन्न हो जाएगी। यों विचार कर गोविन्द ने अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि अपने ही गाँव में रहते हुए कोई व्यापार शुरू करेगा और माँ की सेवा करते हुए अपना जीवन यापन करेगा।

इस निर्णय के बाद गोविन्द दूसरे दिन बहुत सवेरे उठ कर अपने गाँव की ओर चल पड़ा।
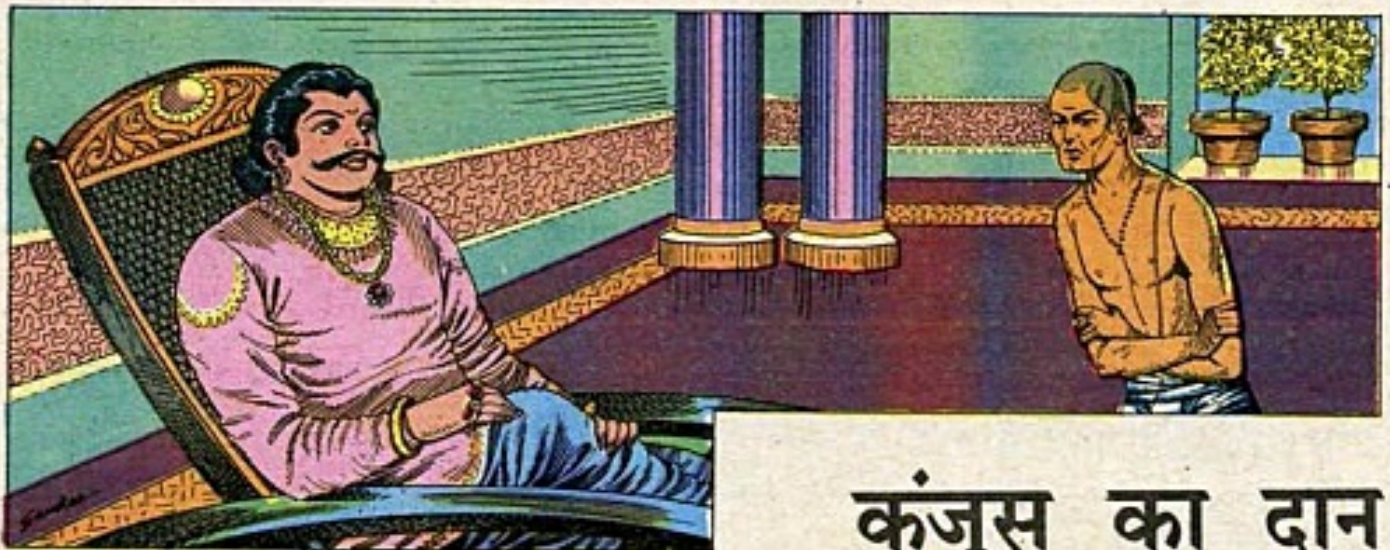
कंजूस का दान

भावनगर में प्रतापचन्द नाम का एक जमीन्दार रहा करता था। वह आस-पास के गाँव में अव्वल दर्जे के कंजूस व मक्खीचूस के रूप में मशहूर था। जब वह बूढ़ा हो चला, तब उसके मन में पाप के भय के साथ भगवान के ध्यान का विचार भी पैदा हुआ।

एक बार भावनगर में एक साधु आया। प्रतापचन्द ने उसके दर्शन करने के बाद निवेदन किया— "महात्मा, मेरी मृत्यु के बाद यदि स्वर्ग में पहुँचना हो तो मुझे इस जीवन में क्या-क्या करना होगा, कृपया बताइए।" साधु ने उसे सलाह दी कि वह दिल खोल कर दान करें। प्रतापचन्द साधु को दान करने का वचन देकर अपने महल को लौट आया।

जमीन्दार की ये बातें एक गरीब ब्राह्मण ने सुन लीं जो उस वक्त साधु से मिलने आया हुआ था। वह दूसरे दिन जमीन्दार के घर पहुँचा। उस वक्त जमीन्दार एक आराम कुर्सी पर लेटा हुआ था। गरीब ब्राह्मण ने देखा कि उस वक्त जमीन्दार रेशमी वस्त्र पहने हुए हैं; उस के कंठ में सोने की माला झूल रही है और उसकी पांचों उंगलियों में हीरे जड़ी अंगूठियाँ दमक रही हैं। इसलिए गरीब ब्राह्मण ने सोचा कि उसे दान में एक क़ीमती वस्तु कम से कम अवश्य प्राप्त हो जाएगी।

जमीन्दार ने गरीब ब्राह्मण की ओर देख कर उस के आने का कारण भांप लिया और उसे फिर दूसरे दिन आने को कहा।

दूसरे दिन गरीब ब्राह्मण जमीन्दार के घर पहुँचा और उसे देख कर हैरान रह गया, क्योंकि उस वक्त जमीन्दार साधारण वस्त्र पहने हुए था और उसकी उंगलियों में एक भी अंगूठी नहीं थी।

जमीन्दार ने मुस्कुराते हुए ब्राह्मण से कहा— "मुझे यह भावना बिलकुल अच्छी नहीं लगती कि एक व्यक्ति बड़ा है और दूसरा

ब्रह्मदत्त शर्मा

छोटा। इसलिए मैं जमीन्दारी रीतियों को त्याग कर तुम जैसे साधारण नागरिक की ज़िन्दगी बिताना चाहता हूँ। इस वक्त तुम और मैं — हम दोनों समान हैं ! इस कारण से तुम्हें दान देने का कोई सवाल ही नहीं उठता ।"

गरीब ब्राह्मण विनय पूर्वक बोला— "आप भले ही अपनी वेश-भूषा बदल दें, पर आपकी संपत्ति पराये लोगों की कभी नहीं हो सकती। इस पर आप का ही हक़ और अधिकार होगा। इसलिए आप मुझ से अवश्य ही बड़े हैं। आप इस गरीब को कुछ न कुछ दान देने का अनुग्रह करें ।"

जमीन्दार पल-दो पल सर हिलाते हुए मौन रहा और गरीब ब्राह्मण को दूसरे दिन आने का आदेश दिया ।

दूसरे दिन गरीब ब्रह्मण जमीन्दार को देख और अधिक चकित रह गया, क्योंकि उस वक्त जमीन्दार एक साधु जैसे गेरुआ वस्त्र धारण किए हुए था ।

जमीन्दार ने ब्राह्मण को देखते ही कहा— "मैंने संन्यास ले रखा है। इस संसार के धन और संपत्ति के साथ मेरा कोई संबन्ध नहीं है।"

"तो आपने अपनी सारी संपत्ति का क्या किया ?" गरीब ब्राह्मण ने पूछा ।

"जब मैंने उसे त्याग दिया, तब वह मेरे पुत्रों की हो जाएगी ।" जमीन्दार ने उत्तर दिया ।

"अच्छी बात है, मैं आपके पुत्रों से ही दान मांग लूँगा।" यह कहकर ब्राह्मण आगे की ओर बढ़ा ।

जमीन्दार उस को रोकते हुए बोला— "इन लोगों ने मेरे सामने यह प्रतिज्ञा की है कि मुझ से प्राप्त संपत्ति में से वे एक पाई भी दूसरों को दान नहीं करेंगे। वे तो अपने पिता के आज्ञाकारी पुत्र हैं ।"

इस पर गरीब ब्राह्मण गहरी सांस लेकर अपने घर की ओर चल पड़ा ।

जमीन्दार ने सोचा कि इस घटना के बाद कोई याचक उसके यहाँ दान मांगने नहीं आएगा और इसी विश्वास के बल पर उस दिन रात को जमीन्दार गहरी नींद सोया ।

विष्णु पुराण

श्रीकृष्ण के महत्व की वृद्धि के साथ उनके शत्रुओं की संख्या भी बढ़ती गई। शिशुपाल और जरासंध के दल में कई दुष्ट राजा शामिल हो गये। पौंड्रक नामक करूश देश का राजा काष्ठ के कृत्रिम हाथ तथा शंख-चक्र बनवाकर अपनी बाहुओं में धारण करके और हाथ में गदा लेकर डींग मारने लगा कि मैं ही विष्णु का अवतार हूँ और कृष्ण अवतार पुरुष नहीं है। शिशुपाल का छोटा भाई शाल्व सौमक नामक विमान में आरूढ़ होकर द्वारका नगर पर उड़ते हुए कृष्ण को युद्ध करने के लिए ललकारने लगा। पूर्वी दिशा में नरकासुर प्रचण्ड रूप में आन्दोलन व अत्याचार करने लगा। दक्षिण में बलि चक्रवर्ती का पुत्र बाणासुर शिवजी के संरक्षण में शोणपुर को अपनी राजधानी बनाकर राक्षसों के राज्य का विस्तार करने लगा।

कालयवन का छोटा भाई कालान्तक था। ज्योतिषियों ने उस की जन्मपत्री देख बताया था कि किसी भी प्राणी से उस के प्राणों को कोई खतरा नहीं है। इसलिए अहंकार में आकर वह यवन व म्लेच्छ सेनाओं की मदद से दारुण हत्याकांड रचने लगा। वह देवताओं की मूर्तियों व शिल्पों को ध्वस्त करने तथा देशों को लूटने लगा और कृष्ण के संहार की कोशिश करने लगा।

वह अनेक देशों पर हमला करते हुए गांधार देश में पहुँचा। वहाँ पर संगमरमर पत्थर में गढ़ी सुंदर मोहिनी मूर्ति को देख कर वह मुग्ध हो गया। उस मूर्ति का निर्माण कृष्ण ने विश्वकर्म

२७. कृष्ण की विजय

द्वारा करवाकर उसके भीतर अपने योग की मायाग्नि को प्रवेश करवा दिया था। यह बात कालान्तक नहीं जानता था।

सालभंजिका की उस प्रतिमा को ले जाकर कालान्तक ने अपने अन्तःपुर में रख लिया। वह सोचने लगा कि उस शिल्प सुन्दरी में यदि कोई प्राण फूंक सके तो क्या ही अच्छा होता।

एक दिन रात को वेणु गान के अनुरूप ताल देने वाली पायल की ध्वनि को सुन कर कालान्तक जाग उठा और उसने देखा कि मूर्ति की जगह एक सुन्दरी नृत्य कर रही है। मोहावेश में आकर कालान्तक ने चट उस की बाहुओं को अपने गले में लपेट लिया। दूसरे ही क्षण वह मूर्ति पुनः पत्थर बन गई। इस पर कालान्तक मूर्ति के बाहु-बन्धन में कसकर जल करके धम्म से नीचे गिर पड़ा। मूर्ति के हाथ टूट गए। साथ ही कालान्तक मर गया। पर यवन राज्य में खंडित हाथों वाली मोहिनी की मूर्ति मात्र रह गई।

इसके बाद कृष्ण ने कालान्तक की सेनाओं को मार भगाया। इसी बीच एक विशाल अग्नि पर्वत फूट पड़ा जिसकी ज्वालाओं में यवन राज्य भस्मीभूत हो गया।

इस प्रकार पश्चिमी दिशा में म्लेच्छ तथा यवनों का विद्रोह तो दब गया, पर पूर्वी दिशा में प्रागज्योतिषपुर के शासक नरकासुर के अत्या चार बढ़ने लगे। उसके अत्याचारों से प्रजा में त्राहि त्राहि मच रही थी।

वराहावतार ने जब पृथ्वी का उद्धार किया था, तब भूदेवी के गर्भ से उत्पन्न नरकासुर प्राग ज्योतिषपुर को राजधानी बनाकर राज्य करने लगा। उसने असुर सेनाओं को लेकर देव लोक पर चढ़ाई कर दी और देवताओं पर विजय प्राप्त कर ली। वह देवमाता अदिति के कर्ण कुण्डल खींच लाया। ऋषि-मुनि, साधु-संत व सज्जन पुरुषों को सताने लगा। उसने पृथ्वी को एक दूसरा ही नरक बना डाला। उसने सोलह हज़ार कन्याओं को बंदी बना लिया था।

नरकासुर के अत्याचारों से तंग आकर देवता और मुनियों ने उससे मुक्ति की कृष्ण से प्रार्थना की। कृष्ण ने उन्हें अभय दान दिया और नरकासुर का संहार करने के लिए चल पड़े। उनके साथ सत्यभामा भी निकल पड़ी।

नरकासुर को यह वर प्राप्त था कि माता भू देवी के द्वारा घायल होने पर ही उस का संहार संभव है। सत्यभामा भू देवी के अंश को लेकर पैदा हुई थी।

श्री कृष्ण ने सत्यभामा के साथ गरुड़ वाहन पर सवार हो प्रागज्योतिषपुर पर आक्रमण कर दिया और असुर सेनाओं का अंत कर डाला।

अन्त में एक मत्त हाथी पर सवार हो नरकासुर ने श्री कृष्ण का सामना किया। युद्ध करके कृष्ण जब विश्राम कर रहे थे, तब सत्यभामा ने नरकासुर के साथ घनघोर युद्ध किया।

सत्यभामा ने अपने धनुष की प्रत्यंचा को कानों तक खींच कर नरकासुर पर लक्ष्य करके छोड़ दिया। वह बाण नरकासुर के वक्षस्थल पर गहराई के साथ गड़ गया। "अम्मा!" कह कर नरकासुर पृथ्वी पर गिर पड़ा। फिर अपना सारा साहस बटोर कर गदा उठाए श्री कृष्ण पर टूट पड़ा। श्री कृष्ण ने चक्रायुध से नरकासुर का सर काट डाला

सर कटते ही नरक ने श्री कृष्ण की विष्णु के रूप में स्तुति की और उनसे यह वरदान मांगा कि उस की स्मृति के रूप में उसके इस निर्वाण के दिन प्रसन्नतापूर्वक उत्सव मनायें।

नरकासुर के संहार के दिन नरक चतुर्दशी तथा उसके दूसरे दिन नरक शासन के अंत हो जाने पर दीपावली मनाई जाने लगी। इस के बाद श्री कृष्ण ने नरक के पुत्र भगदत्त का राज्याभिषेक किया और अदिति के कुण्डल

लेकर सत्यभामा के साथ द्वारका लौट आए।

एक दिन श्री कृष्ण रुक्मिणी देवी के महल में थे। उस समय नारद ने आकर एक पारिजात पुष्प श्री कृष्ण के हाथ में दिया। कृष्ण ने उस पुष्प को रुक्मिणी के हाथ दे दिया। यह खबर मिलते ही सत्यभामा रूठ गई। इस पर कृष्ण ने उसे समझाया— "तुम दुखी मत होओ। पारिजात वृक्ष को ही लाकर तुम्हारे महल में रोप दूँगा।"

अदिति के हाथ कुण्डल सौंपने के बहाने श्री कृष्ण सत्यभामा के साथ गरुड़ पर सवार हो देव लोक में पहुँचे। वहाँ पर अदिति के हाथ कुण्डल सौंप दिए और सत्यभामा के साथ नन्दन वन में विहार करते हुए श्री कृष्ण ने पारिजात

वृक्ष को उखाड़ लिया ।

सत्यभामा और श्री कृष्ण इस प्रकार पारिजात का अपहरण करके उसे लिए जा रहे थे । तभी इन्द्र उन के साथ युद्ध करने के लिए आ गए । उस वक्त इन्द्र ने कृष्ण पर वज्रायुध फेंक दिया । वह गरुड के पंख से जा लगा । गरुड ने एक पर को झटक कर उसे गिरा दिया ।

इस प्रकार इन्द्र का गर्व भंग हुआ । उन्होंने कहा— "जब तक श्री कृष्ण पृथ्वी पर रहेंगे, तब तक परिजात वृक्ष भी पृथ्वी पर रहेगा ।"

सत्यभामा के अंतःपुर का उद्यान पारिजात वृक्ष के फूलों से शोभित हो उठा ।

श्री कृष्ण ने पुत्र की प्राप्ति के लिए कैलास पर जाकर तपस्या की और शिवजी का अनुग्रह प्राप्त किया । उस समय शाल्व और पौंड्रक ने द्वारका के निवासियों को खूब सताया । कृष्ण ने वापस आकर उन का वध कर डाला ।

दन्तवक्र मृत व्यक्तियों के अन्तिम संस्कार कर रहा था, उसी समय श्री कृष्ण उसके सामने आ गए । इससे क्रोध में आकर वह कृष्ण पर हमला कर बैठा । श्री कृष्ण ने उसका संहार कर दिया । तब 'विजय' का जो अंश उसके भीतर से निकला वह ज्योति के रूप में श्री कृष्ण के भीतर समा गया ।

श्री कृष्ण के प्रद्युम्न आदि अनेक पुत्र हुए । प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध को बाणासुर की पुत्री उषा ने सपने में देखा और उस पर मोहित हो गई । उस की सखी चित्रलेखा शांबरी माया के प्रभाव से अनिरुद्ध को उषा के अन्तःपुर में ले आई । उषा ने अनिरुद्ध को अपने पति के रूप में वर लिया ।

बाणासुर ने अनिरुद्ध को नागपाश में बन्दी बनाकर कारागार में रख दिया । अपने पोते को छुड़ाने के लिए श्री कृष्ण बाणासुर के साथ युद्ध करने आए । बाणासुर को बचाने के लिए शिवजी श्री कृष्ण के साथ युद्ध करके उनके हाथों हार गए ।

श्री कृष्ण ने बाणासुर के एक हज़ार हाथों में से केवल दो हाथों को बचाकर बाक़ी सब काट डाले । इस पर बाणासुर शरणागत बन गया और श्री कृष्ण के पोते अनिरुद्ध के साथ अपनी

पुत्री उषा का विवाह करके सम्बन्ध स्थापित कर लिया। इस प्रकार उषा और अनिरुद्ध का विवाह संपन्न हुआ। इससे दक्षिण के असुर तथा उत्तर देश के राजाओं के बीच रिश्ता जुड़ गया और सारे देश में एकता स्थापित हो गई।

इसके बाद श्री कृष्ण पांडवों के सहायक बन गए। तब बलराम की इच्छा के विपरीत श्री कृष्ण ने अपनी बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन के साथ कर दिया।

खाण्डव वन के दहन के समय श्री कृष्ण और अर्जुन ने उस वन में रहनेवाले राक्षसों के महा शिल्पी मय की रक्षा की थी। इस पर मय ने वचन दिया कि पाण्डवों के लिए वह एक अद्भुत सभा भवन बना कर देगा। अग्निदेव ने श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र, पाँचजन्य शंख और अर्जुन को गांडीव धनुष, देवदत्त शंख तथा अक्षय तूणीर समर्पित किए।

युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ का शुभारंभ किया। अब जरासंध के संहार का समय निकट आ गया था।

श्री कृष्ण, भीम और अर्जुन छद्मवेष में अतिथियों के रूप में एक बार जरासंध के महल में पहुँचे।

जरासन्ध, बकासुर, दुर्योधन, कीचक तथा भीमसेन समान रूप से शक्तिशाली थे। श्री कृष्ण जानते थे कि इन में से एक ही के द्वारा बाकी चारों व्यक्तियों का वध करना होगा। इस के पूर्व ही भीम ने बकासर का वध किया था,
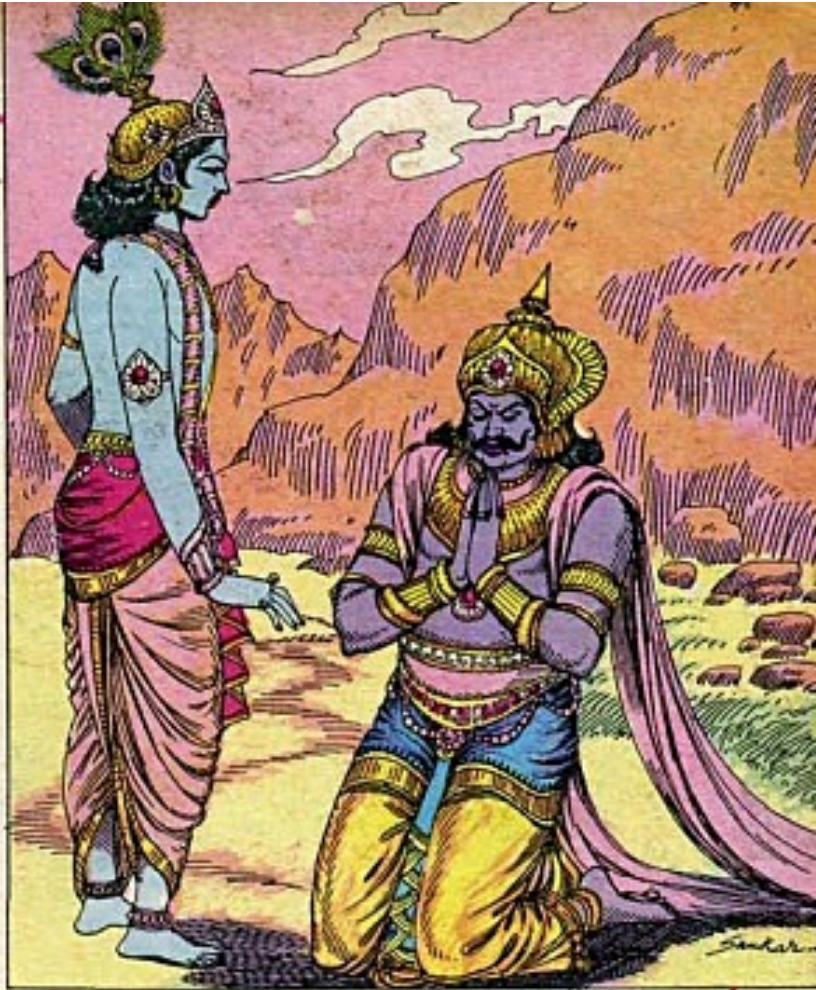
इसलिए भीमसेन को ही जरासन्ध का वध करना होगा। यह बात निश्चित थी कि जरासन्ध का वध अस्त्र-शस्त्रों के साथ नहीं होगा। उसके शरीर को दो भागों में चीर कर ही उसे मारा जा सकता था।

श्री कृष्ण ने जरासन्ध को बताया कि भोजन देने के बदले हम में से किसी एक के साथ तुम मल्ल युद्ध करो। यही कामना लेकर हम तुम्हारे पास आए हैं।

"हे कृष्ण, तुम मुझसे डर कर प्रवर्षण गिरि में भाग गए थे। अर्जुन तो दुर्बल है। अब रही भीमसेन की बात। वही मेरे साथ मल्ल युद्ध करने योग्य है।" जरासन्ध ने कहा।

इस पर भीमसेन और जरासन्ध के बीच

भयंकर रूप से मुष्टि युद्ध तथा मल्ल युद्ध हुए। भीमसेन ने जरासन्ध को खूब सताया और अंत में श्री कृष्ण के संकेत के अनुसार उस के शरीर को दो समान भागों में चीर डाला और उन भागों को फिर से जुड़ने से रोकने के लिए उन को अस्त-व्यस्त बना कर छोड़ दिया। इस प्रकार श्री कृष्ण ने भीमसेन के हाथों जरासन्ध का संहार करवाया।

भीष्म के सुझाव पर युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ के लिए अग्रस्थान और प्रथम तांबूल श्री कृष्ण को दे दिया।

इस पर सभा भवन के बीच खड़े होकर शिशुपाल ने श्री कृष्ण को अग्रस्थान देने में आपत्ति की। उसने तलवार खींच कर पांडवों तथा श्री कृष्ण का अंत करने की चेतावनी दी। उसने श्री कृष्ण पर यह आरोप लगाया कि वह चोर और नीच कुल का है, अतः यज्ञ का फल प्राप्त करने योग्य नहीं है।

तब तक शिशुपाल के अपराध सौ से अधिक हो गए थे।

श्री कृष्ण ने क्रोध में आकर शिशुपाल का सर सुदर्शन चक्र से काट डाला। इस कारण शिशुपाल के भीतर से 'जय' का अंश ज्योति के रूप में निकल कर श्री कृष्ण के भीतर समाहित हो गया। जय-विजय का तीसरा जन्म समाप्त हुआ। वे अपने शाप से मुक्त होकर विष्णु के द्वारपालों के रूप में पुनः वैकुण्ठ में चले गए।

दुर्योधन पांडवों के लिए मय शिल्पी के द्वारा निर्मित मय सभा भवन को देख आश्चर्य चकित था और कई बार वहाँ की अद्भुत रचना को देख भ्रम में आकर अपमानित भी हुआ था। एक बार वह रत्न खचित कालीन के भ्रम में आकर उस पर क़दम रखकर जल में गिर गया। इसे देख द्रौपदी हँस पड़ी। इस पर दुर्योधन अपमान के भार से व्याकुल हो उठा। इस पर शकुनि ने उसको सांत्वना देकर वचन दिया कि उसे इस अपमान का बदला लेने का अवसर दिलाएगा और पांडव तथा द्रौपदी को भी उसके गुलाम बनाकर छोड़ देगा। पर इस के लिए युधिष्ठिर को जुआ खेलने के लिए निमंत्रित करना होगा।

सुदामा श्री कृष्ण के बाल सखा थे। श्री कृष्ण और बलराम ने मुनि सांदीप के यहाँ
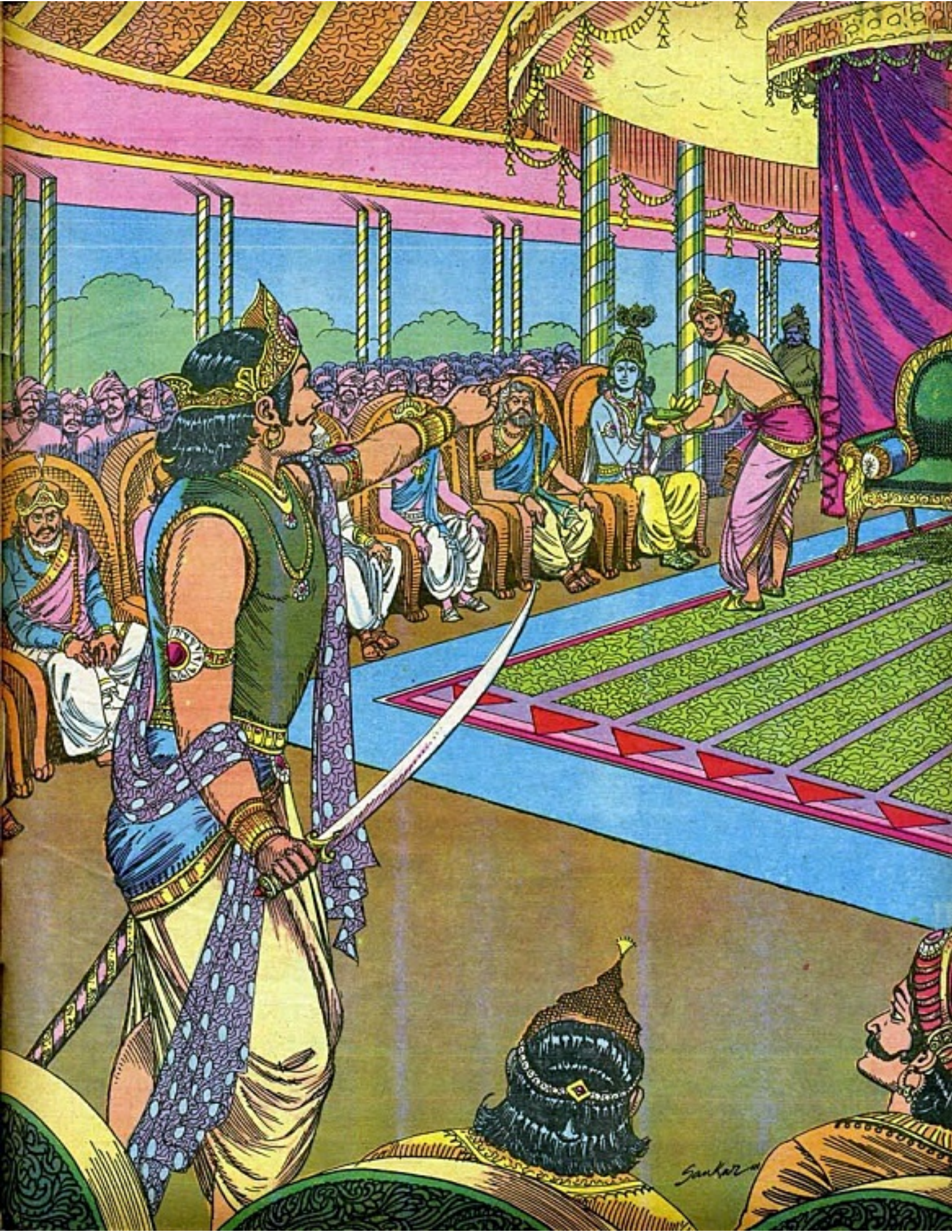
विद्याभ्यास किया था। उस समय सुदामा उनके सहपाठी थे।

अधिक संतान तथा दरिद्रता से पीड़ित वह ब्राह्मण सुदामा अपनी पत्नी की सलाह पाकर श्री कृष्ण से मिलने के लिए घर से निकल पड़े। उनकी पत्नी ने कृष्ण के लिए कुछ स्वादिष्ठ चिऊड़े बना कर पोटली में उनके हाथ दे दिया।

श्री कृष्ण द्वारकापुरी में अपनी आठ पटरानियों के साथ अपने महल के ऊपरी तल पर झूले पर झूल रहे थे। उस समय दूर से आते हुए सुदामा को देख वे पैदल चल कर उनके स्वागत के लिए आगे आये और अपने बाल सखा के साथ गाढ़ालिंगन किया तथा महल में लाकर अपने सिंहासन पर बिठाया।

श्री कृष्ण की आठों पटरानियों ने सुदामा की अनेक प्रकार से परिचर्या की। श्री कृष्ण द्वारा ऐसा आदर-सत्कार पाकर सुदामा आनन्द में तन्मय हो गये। उसी वक्त कृष्ण ने उन के हाथ की चिऊड़ों की पोटली लेकर उसे खोल दिया और मुट्ठी भर चिऊड़ा लेकर प्रेम से मुँह में डाल लिया। इसके बाद बाकी चिऊड़ा उन की आठों पत्नियों ने बांट कर खा लिया।

सुदामा श्री कृष्ण के द्वारा ऐसा अपूर्व आदर-सत्कार पाकर उस बात को बिल्कुल भूल गया कि वह किस काम से उनके पास आया था। वह बार-बार अपने मन में श्री कृष्ण का स्मरण करते हुए अपने घर की ओर चल पड़ा। पर घर पहुँच कर वह अपने मकान को पहचान नहीं पाया।

सुदामा के छोटे मकान की जगह एक अद्भुत महल खड़ा था। उस महल की दीवारें चांदी व सोने की चमक से दमक रही थीं। उसके स्तम्भ रत्नखचित थे। उसकी पत्नी रत्न-आभूषणों से शोभायमान थी। बच्चे रेशमी वस्त्र धारण करके वसन्तकालीन पुष्पों की भांति प्रसन्नता पूर्वक खेल रहे थे। आठों सिद्धियाँ उस के मकान में सर्वत्र व्याप्त थीं।

इस के बाद सुदामा, उसकी पत्नी व बच्चे श्री कृष्ण की कृपा की स्तुति करते हुए भक्तिभाव से अनेक वर्षों तक जीवन-यापन करते रहे।
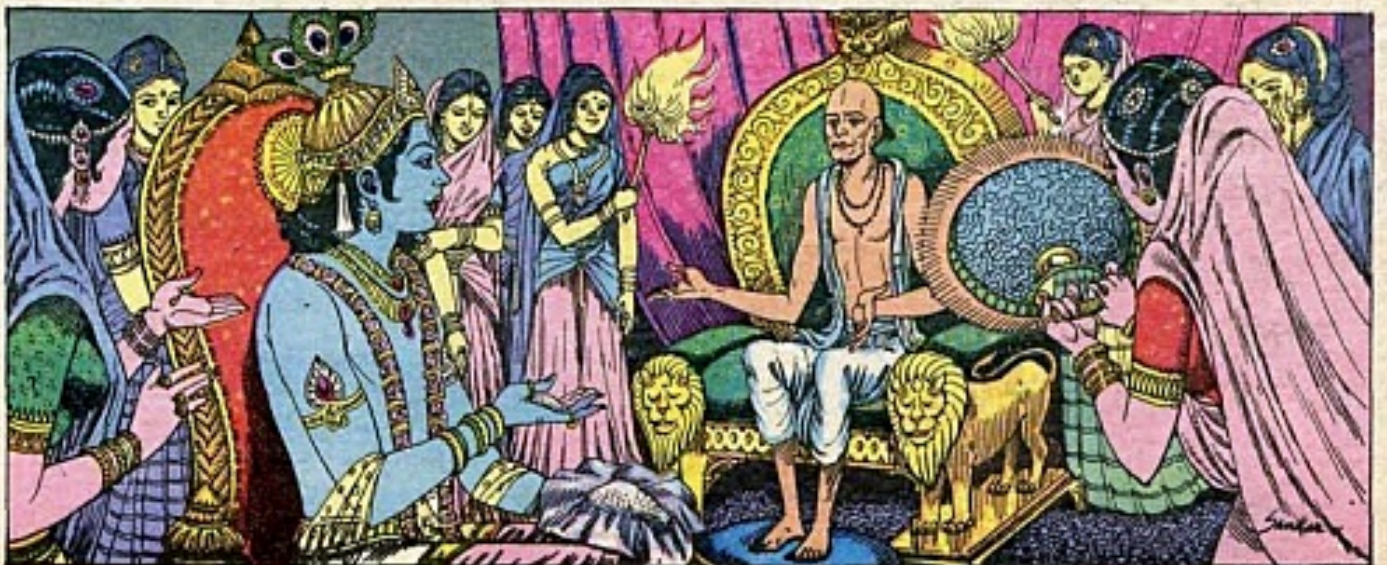
अनोखी चिड़िया

फारस देश का शिराज नगर एक बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र होने के साथ-साथ एक प्रमुख पर्यटन केन्द्र भी था। इस कारण उस नगर में विविध प्रदेशों के लोग अकसर आया करते थे। लेकिन उस नगर में आने वालों को एक जंगल से होकर यात्रा करनी पड़ती थी। जंगल के रास्ते में अक्सर उन्हें एक अनोखी चिड़िया दिखाई देती थी। उस चिड़िया को देखने वाले आश्चर्य से यह कहा करते थे कि हमने आज तक ऐसी अनोखी चिड़िया कहीं नहीं देखी है। जिन लोगों ने उस चिड़िया का संगीत सुना था, वे लोग उसकी तुलना गंधर्वगान से किया करते थे।

उस अनोखी चिड़िया को पकड़ने का कई लोगों ने अनेक प्रकार से प्रयत्न किया। उन लोगों में न केवल धनी परिवारों के युवक थे, बल्कि पड़ोसी राज्यों के राजकुमार भी थे। लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि जो भी चिड़िया को पकड़ने जाता वह फिर कभी वापस नहीं लौटता। वे सब पत्थर की मूर्तियों में बदल जाते थे।

उस विचित्र चिड़िया का समाचार शिराज नगर की राजकुमारी ने भी सुना। उसके मन में उस चिड़िया को प्राप्त करने की बड़ी इच्छा पैदा हुई। उसने अपने पिता से कह कर यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि उस अनोखी चिड़िया को पकड़ कर लाने वाले युवक के साथ ही वह विवाह करेगी।

उस नगर में अमीर परिवार के तीन युवक रहते थे। वे तीनों बचपन से ही आपस में मित्र थे। उनमें से एक युवक राजकुमारी से शादी करने के ख्याल से चिड़िया की खोज में जंगल की ओर चल पड़ा।

यात्रियों से पूछ-ताछ करता हुआ आखिर वह उस चिड़िया तक पहुँच गया। दो पहर का समय था। चिड़िया जंगल में एक पेड़ की डाल

अरब्य रजनी की कहानी

पर बैठी हुई थी। वह धीरे-धीरे उसे पकड़ने के लिए उस पेड़ के पास पहुँचा। चिड़िया उसे देख कर मधुर स्वर में गाने लगी। उसका गीत सुन कर युवक तन्मय हो उठा और वह भी उसके सुर में सुर मिला कर चिड़िया का अनुकरण करने लगा। देखते-देखते वह पत्थर की मूर्ति में बदल गया।

एक महीना बीत गया। तब तीनों मित्रों में से दूसरा युवक चिड़िया की खोज में चल पड़ा। उसके मन में भी राजकुमारी के साथ विवाह करने की प्रबल इच्छा थी। लेकिन वह भी लौट कर नहीं आया।

जब एक महीना और गुजर गया तब तीसरा मित्र हनीफ़ जंगल की ओर चल पड़ा। कुछ लोगों ने उसे रोकना चाहा किन्तु हनीफ़ ने उन्हें बताया— "मेरे मन में उस चिड़िया को पकड़ने की इच्छा नहीं है, और न राजकुमारी से शादी करने की। मैं वास्तव में अपने मित्रों की खोज में जा रहा हूँ। हो सका तो उनकी रक्षा करके उन्हें अपने साथ ले जाऊँगा। वरना इस प्रयत्न में मैं अपनी जान तक देने को तैयार हूँ।"

हनीफ़ भी आखिरकार पता लगाते-लगाते उस अनोखी चिड़िया के पास पहुँच गया। हनीफ़ को देखते ही वह चिड़िया मधुर स्वर में गाने लगी। हनीफ़ उसके संगीत पर मुग्ध हो गया और उस संगीत का अनुकरण करने की उसके मन में तीव्र उत्कण्ठा हुई। पर बड़ी मुश्किल से उसने अपने आप पर नियंत्रण रखा। हनीफ़ चिड़िया के और पास आया। चिड़िया ने अपना गीत बन्द करके हनीफ़ की ओर देखा। हनीफ़ की हिम्मत बढ़ गई और उस ने तभी हाथ बढ़ा कर बड़ी आसानी से उसे पकड़ लिया।

इसके बाद उसने प्यार से उसका सिर सहलाया और कहा— "तुम्हारी सुन्दरता अद्भुत है। इस दुनिया में तुम जैसी कोई दूसरी चिड़िया न होगी। क्या तुम मेरे दोनों मित्रों को प्राण-दान न कर सकोगी?"

चिड़िया ने सिर हिला कर कहा— "अच्छी बात है। मैं तुम्हारी इच्छा अवश्य पूरी करूँगी। इन पत्थर की मूर्तियों में बदले हुए तुम्हारे मित्रों के ऊपर से मुझे उड़ने दो। मुझे अपने हाथों से

मुक्त कर दो।"

इस पर हनीफ़ ने चिड़िया को छोड़ दिया। वह हनीफ़ के मित्रों के सिर के ऊपर गोलाकार होकर दो बार उड़ी। शीघ्र ही दोनों मित्र अपने पूर्व रूप में बदल गये।

हनीफ़ प्रसन्न होकर बोला— "तुम्हारे सौन्दर्य पर मुग्ध होकर तुमको पकड़ने के लिए कुछ और युवक आये और वे सब शिलाओं में बदल गये। क्या तुम उन्हें भी मानवों में पुनः बदल सकोगी ?"

अनोखी चिड़िया हनीफ़ की बात मान कर पत्थर की अन्य मूर्तियों पर भी उसी प्रकार दो बार उड़ी। दूसरे ही क्षण वे सभी मनुष्यों के रूप में प्रत्यक्ष हो गये और वे सब युवक हनीफ़ के प्रति कृतज्ञता प्रकट करके अपने-अपने घर चले गये।

इसके बाद हनीफ़ चिड़िया से बोला— "मैं तुम्हारे इस उपकार को कभी नहीं भूल सकता। लेकिन तुम से मेरा एक निवेदन है कि तुम मेरे साथ नगर में क्यों नहीं आती ?"

"अवश्य आऊँगी।" चिड़िया ने कोमल स्वर में कहा।

हनीफ़ ने तुरन्त अपने साथ लाये पिंजड़े का द्वार खोल दिया। चिड़िया ने हनीफ़ से कहा— "तुमने मेरे बायें पैर की अंगूठी देखी है न ? उसे उतार कर अपनी उंगली में धारण कर लो। किसी संकट में यह तुम्हारे काम आयेगी।" इतना कह कर चिड़िया पिंजड़े के अन्दर चली

गई।

हनीफ़ ने चिड़िया के पैर की अंगूठी निकाल कर अपनी उंगली में धारण कर ली। इसके बाद वे तीनों मित्र अपने नगर की ओर चल पड़े। रास्ते में अन्धेरा हो गया, इसलिए वे तीनों मित्र रात बिताने के लिए जंगल में ही एक पेड़ के नीचे लेट गये।

जब हनीफ़ गाढ़ी नींद में सो रहा था, आधी रात के बाद उसके दुष्ट मित्रों ने आपस में सलाह-मशविरा कर उसके हाथ-पाँव बाँध दिये और उसे समीप के एक उजड़े हुए कुएं में डाल दिया।

भाग्य से उस कुएं में पानी की जगह मुलायम रेत थी, इससे उसे अधिक चोट न

लगी, लेकिन फिर भी ऊपर से गिरने के कारण उस का सर एक दम चकरा गया और वह बेहोश हो गया ।

जब उसे होश आया तो वह अपने पास बैठे एक भूत को देख कर काँप उठा ।

"तुम कौन हो ?" साहस करके हनीफ़ ने उससे पूछा ।

"मैं तुम्हारी अंगूठी में वास करनेवाला भूत हूँ। तुम जब कुएं में गिरे थे, तब तुम्हारे हाथ की अंगूठी कुएं के पत्थरों से रगड़ खा गई, जिससे मैं प्रकट हो गया। अब बताओ, मैं तुम्हारे लिए क्या सहायता करूँ ?" भूत ने जवाब दिया।

हनीफ़ ने उसी क्षण भूत को आदेश दिया— "मुझे तुरन्त इस कुएं से बाहर निकाल दो ।"

इतना कहना था कि भूत ने हनीफ़ को झट कुएं से बाहर निकाल दिया। वहाँ अपने मित्रों और पिंजड़े को न देख कर वह सब कुछ समझ गया । उसने भूत को फिर आदेश देते हुए कहा— "मुझे अभी फौरन अपने नगर में पहुँचा दो ।"

भूत ने हनीफ़ को उसी वक्त नगर में पहुँचा दिया। उस समय राजमहल में राजकुमारी को अनोखी चिड़िया की प्राप्ति की खुशी में उत्सव मनाया जा रहा था। पर राजमहल के सामने हनीफ़ के दोनों मित्र झगड़ रहे थे। वे दोनों ही चिड़िया को पकड़ने का दावा कर रहे थे। राजा को समझ में नहीं आ रहा था कि किसकी बात सच है ।

हनीफ़ ने राजा के पास जाकर कहा— "इस बात की सही जानकारी आप चिड़िया से ही क्यों नहीं कर लेते ? यही इस झगड़े का सच्चा फ़ैसला कर देगी ।"

हनीफ़ को देखते ही उसके दोनों मित्र आपाद मस्तक काँप उठे !

राजा ने दुखी होकर कहा— "यही तो मुश्किल है कि चिड़िया तो कुछ नहीं बोल रही है ।"

"आप उसे मेरे पास लाइये। वह अवश्य बोलेगी । मैं उस के मुँह से सच्ची बात कहलाऊँगा।" हनीफ़ ने कहा ।

राजकुमारी के पास से चिड़िया हनीफ़ के

पास लाई गई ।

जैसे ही पिंजड़ा हनीफ़ के पास मंगवाया गया, हनीफ़ ने उससे पूछा— "क्या सच बताओगी कि जंगल में तुम्हें किसने पकड़ा है ?"

"मुझे पहले आजाद करो। मैं पिंजड़े में बन्द रह कर किसी सवाल का जवाब नहीं दूंगी ।" अनोखी चिड़िया बोल उठी ।

चिड़िया को आज़ाद करने की अनुमति राजकुमारी से माँगी गई । राजकुमारी ने सोचा कि आख़िर उसे तो उसी से विवाह करना है जिसने चिड़िया को पकड़ा है, इसलिए सच्चाई जानने के लिए उसने चिड़िया की शर्त मान ली।

पिंजड़े का द्वार खुलते ही चिड़िया उड़ कर हनीफ़ के कन्धे पर जा बैठी । फिर दो बार बोली— "जंगल में मुझको तुमने ही पकड़ा है, तुमने ही पकड़ा है ।"

चिड़िया के मुँह से यह उत्तर सुन कर उसके दोनों मित्र वहाँ से रफू चक्कर होने लगे। परन्तु राजा के सिपाहियों ने पीछा करके उन्हें पकड़ लिया ।

राजा ने क्रोधित होकर अपने सिपाहियों को आदेश दिया— "इन दुष्टों के सर काट लो।"

पर हनीफ़ ने राजा से निवेदन किया— "महाराज । इन्हें क्षमा कर दीजिए । जंगल में जब ये शिला बन कर निष्प्राण हो गये थे, तब मैंने ही चिड़िया से इन्हें वापस प्राण दिलवाया था । इसलिए इनकी मौत से मुझे बहुत दुख होगा ।" हनीफ़ की प्रार्थना पर राजा ने उसके मित्रों को क्षमा कर दिया ।

इसके बाद अनोखी चिड़िया अपने पंख फड़फड़ाती हुई हनीफ़ के कंधे पर से उड़ी और जंगल की ओर चली गई ।

राजा ने राजकुमारी का विवाह हनीफ़ के साथ बड़ी धूम धाम से कर दिया ।

राजकुमारी और हनीफ़ उस अनोखी चिड़िया को देखने के लिए साल में एक बार अवश्य जाते और जब चिड़िया मोहक स्वर में गाने लगती तब ये दोनों बड़ी सावधानी से अपने ऊपर नियंत्रण रखते ।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अगस्त १९८४ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. Natarajan

Suraj N. Sharma

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जून १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

अप्रैल के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **परतंत्र यौवन !**

द्वितीय फोटो : **स्वतंत्र बचपन !!**

प्रेषक : **भास्कर कोशने,** गणेश स्टोर्स के पास, नाई मोहल्ला, बड़वानी (म. प्र.)

"क्या आप जानते हैं" का उत्तर

१. कालिदास २. होमर ३. जॉन मिल्टन ४. कौटिल्य ५. सर विन्स्टन चर्चिल

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

LIKE TO FLY INTO THE EXCITING WORLD OF ADVENTURE AND HUMOUR?
DOLTON
SUPER COMICS
CAN TAKE YOU THERE
EVERY FORTNIGHT!
IT COSTS ONLY Rs. 2.50 A COPY.
EVIDENTLY THE MOST EASILY AVAILABLE COMICS MAGAZINE YOU'VE EVER READ:
ITS 36 FULL COLOUR PAGES TAKE YOU THROUGH MYSTERY AND EXCITEMENT TO A RENDEZVOUS WITH THE SUPER HEROES–
SUPERMAN
&
BATMAN®
DOLTON COMICS
DC
DOLTON PUBLICATIONS
MADRAS 600 026

पारले

पंचकोण
पाठ में

(राम और श्याम टीना को असली पॉपिन्स पर पॉपिन्स का नाम दिखाते हैं)

पारले पॉपिन्स

everest/84/PP/28-hn

रसीली • प्यारी • मज़ेदार